ISSN 2394-8485

मासिक

गुरमत ज्ञान

३/-

माघ-फाल्गुन संवत् नानकशाही ५५६ फरवरी 2025 वर्ष १८ अंक ६

बड़ा घल्लूघारा का दृश्य

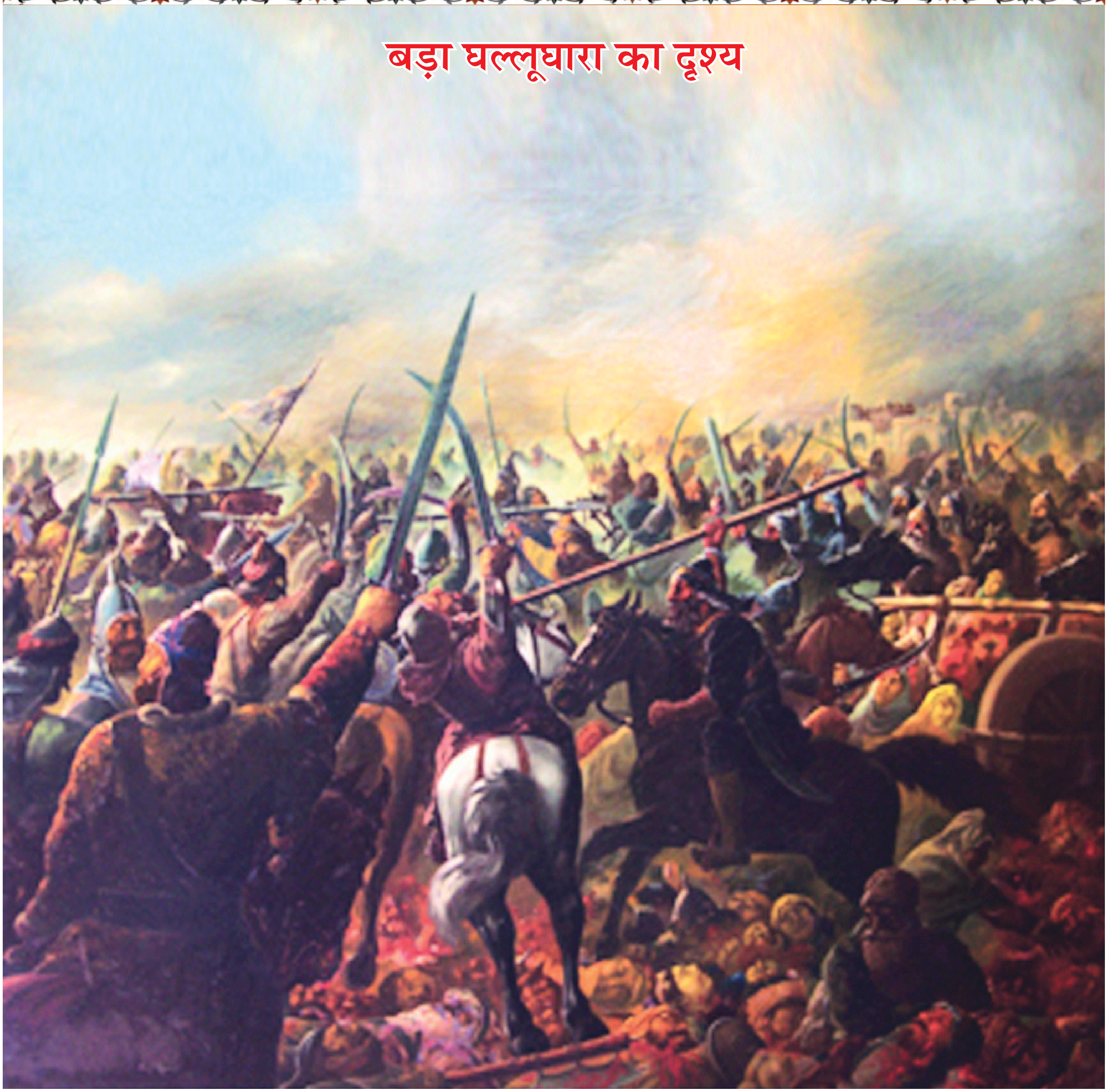

साका गुरुद्वारा श्री ननकाणा साहिब का हृदयवेधक दृश्य

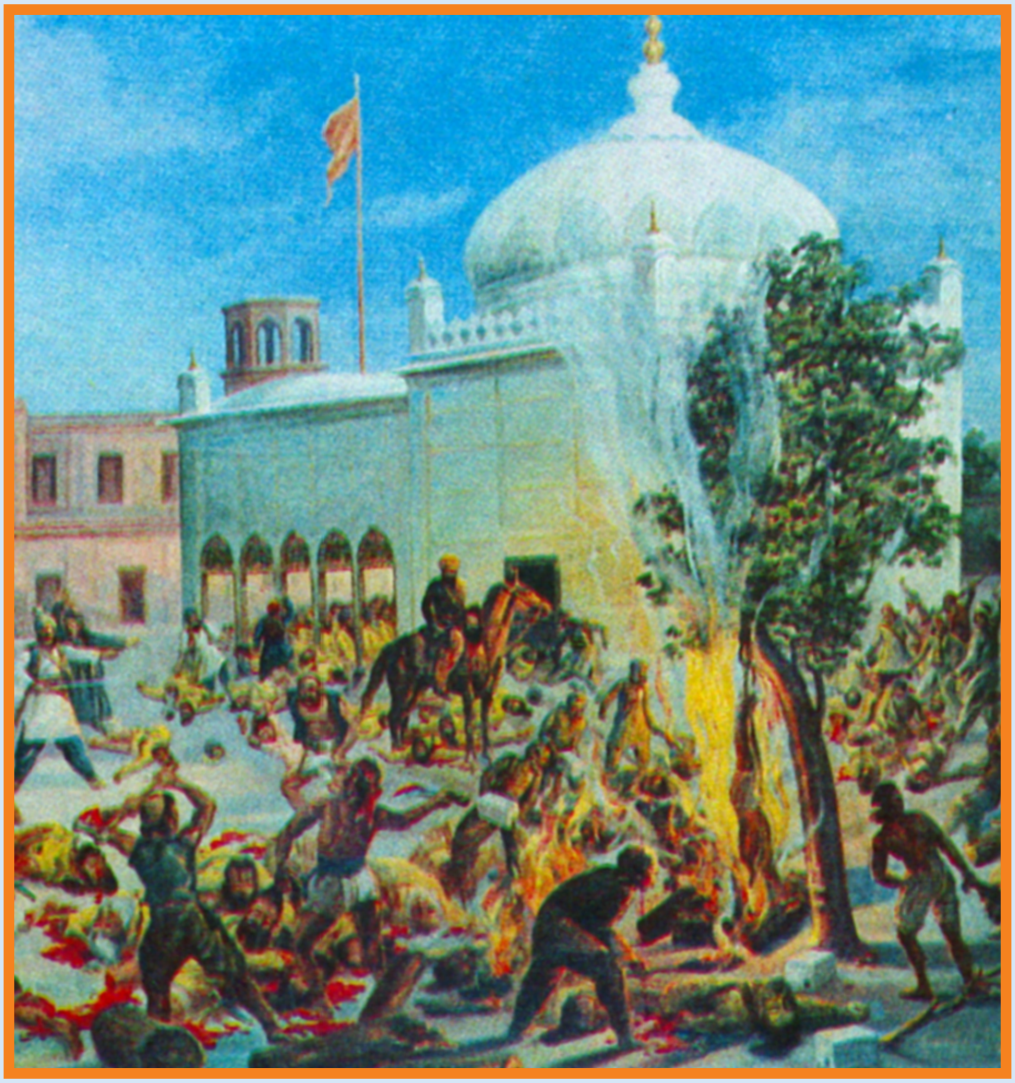

ੴ सतिगुर प्रसादि॥

गुर गिआन अंजनु सचु नेत्री पाइआ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ॥

मासिक

गुरमत ज्ञान

माघ-फाल्गुन संवत् नानकशाही 556
वर्ष 18 अंक 6 फरवरी 2025

संपादक : सतविंदर सिंघ
सहायक संपादक : जगजीत सिंघ

चंदा	
सालाना (देश)	10 रुपये
आजीवन (देश)	100 रुपये
सालाना (विदेश)	250 रुपये
प्रति कापी	3 रुपये

चंदा भेजने का पता
सचिव, धर्म प्रचार कमेटी
(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)
श्री अमृतसर साहिब -143006
फोन : 0183-2553956-60
एक्सटेंशन नंबर
वितरण विभाग 303 संपादन विभाग 304
फैक्स : 0183-2553919
e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com
website : www.sgpc.net

ISSN 2394-8485

विषय-सूची

गुरबाणी विचार 4
संपादकीय 6
कोमल भावनाओं की शक्ति के पुंज : श्री गुरु हरिराय साहिब 8
-डॉ. सत्येन्द्र पाल सिंघ
भक्त रविदास जी 14
-स. परमजीत सिंघ सुचिंतन
सिक्खों का नामोनिशान मिटाने का नापाक इरादा : बड़ा घल्लूघारा 26
-डॉ. मनजीत कौर
महान योद्धा सरदार शाम सिंघ अटारी 30
-डॉ. राजेंद्र सिंघ साहिल
नानक तिना बसंतु है . . . 32
- डॉ. शमशेर सिंघ
गुरुद्वारा श्री ननकाणा साहिब के साके का ऐतिहासिक वृत्तांत 35
-डॉ. कशमीर सिंघ 'नूर'
जैतो के मोर्चे का वृत्तांत : सरदार नरैण सिंघ की जुबानी 39
-डॉ. तेजिंदर पाल सिंघ
सिक्ख इतिहास के साथ काशी का सम्बन्ध 50
-डॉ. चमकौर सिंघ
खालसा लायब्रेरी 51
-डॉ. मोहन सिंघ
श्रवण-शक्ति का महत्व 53
-प्रिं. जोगिंदर सिंघ
ख़बरनामा 56

गुरबाणी विचार

फलगुणि अनंद उपारजना हरि सजण प्रगटे आइ ।।
संत सहाई राम के करि किरपा दीआ मिलाइ ।।
सेज सुहावी सरब सुख हुणि दुखा नाही जाइ ।।
इछ पुनी वडभागणी वरु पाइआ हरि राइ ।।
मिलि सहीआ मंगलु गावही गीत गोविंद अलाइ ।।
हरि जेहा अवरु न दिसई कोई दूजा लवै न लाइ ।।
हलतु पलतु सवारिओनु निहचल दितीअनु जाइ ।।
संसार सागर ते रखिअनु बहुड़ि न जनमै धाइ ।।
जिहवा एक अनेक गुण तरे नानक चरणी पाइ ।।
फलगुणि नित सलाहीऐ जिस नो तिलु न तमाइ ।।१३ ।। *(पन्ना १३६)*

पंचम सतिगुरु श्री गुरु अरजन देव जी महाराज फाल्गुन मास के उपलक्ष्य में उच्चारण की गई इस पावन पउड़ी में इस मास की ऋतु तथा वातावरण एवं लोक-संस्कृति की पृष्ठभूमि में जीव-स्त्री को प्रभु-नाम की सच्ची स्तुति गायन कर मनुष्य जीवन सफल करने का महामार्ग प्रदान करते हैं।

सतिगुरु जी फरमान करते हैं कि फाल्गुन मास में जब शीत ऋतु का अंत होने लगता है और लोग खुशियां मनाते नज़र आते हैं, उस समय सौभाग्यशाली जीव-स्त्रियों में प्रभु-मिलाप की इच्छा व उम्मीद पैदा होती है। संत अथवा गुरु जीव-स्त्रियों का प्रभु के साथ मिलाप का अपनी कृपामयी अगुआई से सबब बनाते हैं। उन जीव-स्त्रियों की जीवन रूपी रात सुखमय हो जाती है, दुखों का ग्रास नहीं बनती। सौभाग्यशाली जीव-स्त्रियों की इच्छा पूर्ण होती है और उनको प्रभु-पति मिल जाते हैं। वे अपनी सखियों के साथ प्रभु की उपमा के गीत गाती हैं और उन्हें प्रभु-पति के अतिरिक्त अन्य कोई नज़र नहीं आता। वे किसी दूसरे को अर्थात् सांसारिक ख्याल आदि को अपने मन-मस्तिष्क में जगह नहीं देतीं।

ऐसे में जीव-स्त्रियां अपना लोक और परलोक संवार लेती हैं। उनको सदीवी सुख-शांति की मानसिक-आत्मिक अवस्था प्राप्त हो जाती है। वे संसार रूपी सागर में डूबने से बच जाती हैं और पुनः जन्म-मरण के चक्र में नहीं पड़तीं अथवा जीवन-मुक्त हो जाती हैं। हम मनुष्य-मात्र

को चाहे एक ही जिह्वा मिली है परंतु प्रभु के अनेक गुण इस एक जिह्वा द्वारा ही गायन किए जा सकते हैं। इसके लिए हमें सतिगुरु की शरण में जाना होता है। फाल्गुन मास में हमको सदैव प्रभु की स्तुति करनी चाहिए, भले ही उसको अपनी स्तुति की जरा भी इच्छा नहीं है। यहां गहरी रमज़ है कि प्रभु की स्तुति करना हमारे अपने हित में है। यह हमारा कोई प्रभु के सिर एहसान नहीं है। प्रत्येक पल प्रभु की सच्ची स्तुति में लगाकर ही जीवन अर्थपूर्ण हो सकता है। समस्त मानव जीवन-रूपी फाल्गुन मास प्रभु-स्तुति के अनुकूल है।

जिनि जिनि नामु धिआइआ तिन के काज सरे।।
हरि गुरु पूरा आराधिआ दरगह सचि खरे।।
सरब सुखा निधि चरण हरि भउजलु बिखमु तरे।।
प्रेम भगति तिन पाईआ बिखिआ नाहि जरे।।
कूड़ गए दुबिधा नसी पूरन सचि भरे।।
पारब्रहमु प्रभु सेवदे मन अंदरि एकु धरे।।
माह दिवस मूरत भले जिस कउ नदरि करे।।
नानकु मंगै दरस दानु किरपा करहु हरे।।१४।।१।। (पन्ना १३६)

श्री गुरु अरजन देव जी बारह माहा मांझ की इस अंतिम पउड़ी में प्रभु-नाम के महातम और पावन बाणी का मूल प्रयोजन दर्शाते हुए मनुष्य-मात्र को नाम-बाणी द्वारा प्रभु-नाम के साथ जुड़कर अमूल्य मनुष्य-जन्म का मूल उद्देश्य सफल करने का मार्ग बख्शिश करते हैं।

गुरु जी फरमान करते हैं कि जिस-जिस मनुष्य ने प्रभु-नाम का ध्यान किया उसी के ही उद्देश्यपूर्ण कार्य पूरे हुए; जिस-जिस ने पूर्ण गुरु के माध्यम से परमात्मा को याद किया वही रूहानी दरबार में सच्चा व खरा सिद्ध हुआ। सभी सुखों अथवा रूहानी सुखों के खजाने रूपी हरि-चरणों से जुड़कर भय के कठिन सागर से पार हुआ जा सकता है। नाम से जुड़ने वाले को प्रेम-भक्ति रूपी अमूल्य वस्तु मिल जाती है। वह माया रूपी विष को सहन् नहीं करता। लालच रूपी झूठ से वह छूट जाता है। उसकी अनिश्चितता खत्म हो जाती है और वह प्रभु-नाम रूपी सत्य से भरपूर हो जाता है। वह परमात्मा को सदैव मन-अंतर में टिकाकर रखता है। जिस पर परमात्मा की कृपा-दृष्टि है उसके सभी महीने, दिन, मुहूर्त अच्छे हैं अर्थात् परमात्मा की कृपा ही जीवन की सफलता का आधार है। गुरु जी कथन करते हैं कि हे प्रभु! मुझ पर भी कृपा-दृष्टि करो और मुझे अपने दर्शन-दीदार प्रदान कर दो!

संपादकीय

गौरवमय हैं फरवरी महीने के सिक्ख शहीदी अफ़साने

सिक्ख कौम ने विश्व-इतिहास में ऐसी नवीनतम और विलक्षण मिसालें कायम की हैं जिनके कारण जनता को हक-सच की रक्षा करते हुए अपनी धार्मिक स्वतंत्रता का एहसास हुआ। श्री गुरु नानक पातशाह की विचारधारा ने यह कर दिखाया कि जिन कर्मकांडों में भारतीय जनता फंस चुकी है, वह असली धर्म-मार्ग नहीं, बल्कि असली धर्म-मार्ग तो वह है जो बिना किसी पाखंड के केवल अकाल पुरख की भक्ति करते हुए अपना और दूसरों का भला करना सिखाता है। यदि धर्म-मार्ग पर चलते हुए भी मानव को अपने अस्तित्व का एहसास न होता हो और वह दूसरों की अधीनता कबूलता हो, तो इससे शर्मनाक तथा बुरी स्थिति और कोई नहीं हो सकती। गुरबाणी का फरमान है— *"जे जीवै पति लथी जाइ ॥ सभु हरामु जेता किछु खाइ॥"* ऐसी जिंदगी जीने वाले लोग जहां मानसिक गुलाम होते हैं, वहीं यह जिंदगी नरक के बराबर होती है। ऐसा ही हाल भारतीय जनता का हुआ था।

विदेशी हमलावर हाकिमों द्वारा हिंदोस्तानी अवाम को पैरों तले रौंदना अपना जन्म-सिद्ध अधिकार समझा जाता था। हालात यहां तक पहुंच चुके थे कि हिंदोस्तानी लोग न केश-दाढ़ी रख सकते थे और न ही सिर पर दसतार सजा सकते थे । उनको घोड़े की सवारी करनी भी मना थी। इसी तरह विदेशी मूल के हाकिमों-हमलावरों ने सारे मूलभूत अधिकार हिंदोस्तानी अवाम से छीन लिए थे। ऐसे हालात में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी महाराज के साजे खालसा पंथ ने हिंदोस्तानियों की इस दुर्दशा के जिम्मेदार हमलावरों को नाकों चने चबवाए। चाहे इसके बदले में सिक्ख कौम ने अपने जानी-माली नुकसान के रूप में बड़ी कीमत चुकाई, परंतु "सिरु दीजै काणि न कीजै॥" के महावाक्य पर पहरा दिया।

सिक्ख कौम ने हिंदोस्तान की जनता से छीने गए अधिकारों की पुनर्स्थापना के लिए यत्न करना आरंभ कर दिया। इन यत्नों के प्रसंग में ही सिक्ख पंथ को गुरु-काल के बाद घल्लूघारों के दौर में से गुज़रना पड़ा । अठारहवीं सदी में मुगल हाकिमों के अत्याचार की श्रृंखला में काहनूंवान के छंब में

'छोटा घल्लूघारा' हुआ। इसी सदी में मलेरकोटला के निकट कुप्प रोहीड़ा नामक स्थान पर अफगान लुटेरे अहमद शाह अब्दाली द्वारा ५ फरवरी, १७६२ ई. को 'बड़ा घल्लूघारा' किया गया। इतिहास गवाह है कि इस घल्लूघारे के कुछ ही वर्षों बाद सिक्खों ने अब्दाली का न केवल हिंदोस्तान में दाखिला स्थायी रूप से बंद कर दिया बल्कि सरदार चढ़त सिंघ के पोते महाबलि महाराजा रणजीत सिंघ ने अफगानों को उनके द्वारा किए गए आक्रमणों का उन्हें स्वाद भी चखाया। इसी तरह सही अर्थों में देश-कौम की सदियों से गुम हुई आन-बान-शान को बहाल किया । यह भी याद रहे कि महाराजा रणजीत सिंघ ने जो खालसाई राज्य स्थापित किया, उसमें हिंदू, सिक्ख, मुसलमान सभी सुखी और खुशहाल बसते रहे, किसी के साथ मज़हब के आधार पर कोई भेदभाव न किया गया। महाराजा रणजीत सिंघ के जीते-जी अंग्रेज हुकूमत खालसाई राज्य की तरफ देख तक न सकी, भले ही वो पंजाब को हड़पने के मंद इरादे अपने अंदर ही अंदर पाल रही थी। पंजाब के अंग्रेज साम्राज्य के अधीन आते ही अंग्रेजों ने सिक्खों के पवित्र गुरुद्वारा साहिबान पर 'महंतशाही प्रबंध' को जबरन थोप कर गुरुद्वारों की पवित्रता को अपवित्र करने की भद्दी चालें चली, जिसके अंतर्गत अनेक साके घटित हुए, जिनमें फरवरी, १९२१ ई. में 'साका गुरुद्वारा श्री ननकाणा साहिब' और फरवरी, १९२४ ई में 'गुरुद्वारा गंगसर साहिब, जैतो का मोर्चा' अपने शहीदी अफसाने बयान करते हैं। इस संघर्ष के दौर में गुरु के अनेक सिंघों ने अपनी जानें न्यौछावर कर जहां भारतवर्ष की मान-मर्यादा को धूमिल होने से बचाया, वहाँ अपने धर्म, कौम और मान-मर्यादा को भी सुरक्षित रखा।

हमारे शहीदी अफ़साने हमारे सिक्ख इतिहास को सदा गौरवान्वित करते रहेंगे। हमें अपने पुरखों द्वारा दी गई कुर्बानियों को कभी नहीं भुलाना चाहिए और अपने इस कुर्बानियों भरे लासानी इतिहास से दिशा लेते हुए सिक्ख पंथ की चढ़दी कला के लिए एकजुट होकर सार्थक प्रयत्न करने चाहिए।

कोमल भावनाओं की शक्ति के पुंज : श्री गुरु हरिराय साहिब

–डॉ. सत्येन्द्र पाल सिंघ*

प्रत्येक सिक्ख अपनी नित्य की अरदास में श्री गुरु हरिराय साहिब का स्मरण करता है। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के पश्चात गुरुगद्दी पर विराजमान होने वाले श्री गुरु हरिराय का गुरु-काल १७ वर्ष ७ महीने था। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब शस्त्र धारण करने वाले प्रथम सिक्ख गुरु थे। श्री गुरु हरिराय साहिब को गुरुता सौंपने के बाद श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का निर्णय निश्चित और नि:सन्देह रूप से एक सुविचारित निर्णय था। गुरु साहिब जानते थे कि समयानुरूप सिक्खों में वीरता का भाव जाग्रत करना आवश्यक है, किन्तु उससे अधिक आवश्यक था उस सिक्ख पंथ के मौलिक सिद्धांतों पर दृढ़ रहना जिसे श्री गुरु नानक साहिब ने प्रेम का पंथ निरूपित किया था। श्री गुरु हरिराय साहिब ने प्रेम-भावनाओं के पोषण का पाठ अपने दादा श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब से बाल्यावस्था में ही सीख लिया था और श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब द्वारा सिक्खों में पोषित वीरता की भावना का प्रेम-भावना से अद्‌भुत समन्वय स्थापित किया था।

श्री गुरु हरिराय साहिब श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के पौत्र और बाबा गुरदित्ता जी के सुपुत्र थे। बाबा गुरदित्ता के दो पुत्रों में बड़े धीरमल और छोटे श्री गुरु हरिराय साहिब थे। गुरु साहिब की शिक्षा-दीक्षा श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की देखरेख में हुई। उन्होंने धर्म और अध्यात्म का पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया और गुरबाणी के गहन तत्वों को बारीकी से समझा। गुरु साहिब अल्पायु में ही अस्त्र-शस्त्र के प्रयोग में पारंगत और युद्ध-कला में भी प्रवीण हो गये थे। तेरह वर्ष की आयु में वे श्रेष्ठ घुड़सवार बन कर उभरे थे। उन्हें घुड़सवारी की शिक्षा भाई बिधी चंद छीना ने दी थी जो अपने समय के चंद कुशल घुड़सवारों में गिने जाते थे। बचपन से ही श्री गुरु हरिराय साहिब नाम-सुमिरन और स्नान हेतु विशेष आग्रह रखते थे। गुरु साहिब प्राय: भाई गुरदास जी की वार २८ की पउड़ी १५ पढ़ा करते थे :

पिछल रातीं जागणा नामु दानु इसनानु दिड़ाए।
मिठा बोलणु निव चलणु
हथहु दे कै भला मनाए।
थोड़ा सवणा खावणा
थोड़ा बोलनु गुरमति पाए।
घालि खाइ सुक्रितु करै
वडा होइ न आपु गणाए।

*ई– १७१६, राजाजी पुरम, लखनऊ – २२६०१७, फोन : ९४१५९६०५३३, ८४१७८५२८९९

साधसंगति मिलि गांवदे
राति दिहैं नित चलि चलि जाए।
सबद सुरति परचा करै
सतिगुरु परचै मनु परचाए।
आसा विचि निरासु वलाए।।

भाई गुरदास जी की उपरोक्त वार की पउड़ी में एक पूर्ण गुरसिक्ख के गुण बताये गये हैं। इसे गुरु साहिबान द्वारा स्थापित एक सिक्ख की जीवन मर्यादा के रूप में भी देखा जा सकता है। श्री गुरु हरिराय साहिब ने अपने जीवन में इन सारी मर्यादाओं का पूर्ण दृढ़ता के साथ पालन कर सिक्खों को प्रेरित करने के लिए उच्च आदर्श स्थापित किया था। गुरु साहिब के बचपन में घटित फूल टूटने की घटना सर्वविदित है। बाग में टहलते हुए गुरु साहिब के चोले (चोगा) से उलझ कर एक फूल टूट गया और धरती पर जा गिरा। गुरबाणी का अध्ययन करते हुए गुरु साहिब को बोध हो चुका था कि वनस्पतियों में भी जीवन होता है। बाल-रूप में गुरु साहिब का मन गहरा आहत हो गया। इसी बीच श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब उधर आ पहुंचे। श्री गुरु हरिराय साहिब के दुखी होने का कारण जान कर श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने उन्हें समझाया कि यदि चोला बड़ा पहना हो तो संभल कर चलना चाहिये। यह धर्म -जीवन की बहुत बड़ी और सारगर्भित शिक्षा थी, जो बल, उत्तरदायित्व, ज्ञान को संयम और विवेक से प्रतिबद्ध करने वाली थी। श्री गुरु हरिराय साहिब ने जीवन भर इस शिक्षा का आदेश की भांति पालन किया।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के ज्योति-जोत समाने के पश्चात जब श्री गुरु हरिराय साहिब गुरुगद्दी पर आसीन हुए तो उनकी आयु मात्र १४ वर्ष, २ माह की थी। आपका निवास कीरतपुर साहिब रहा। यद्यपि बाबा गुरदित्ता जी के बड़े पुत्र और श्री गुरु हरिराय साहिब के बड़े भाई धीरमल भी गुरुगद्दी के दावेदार थे, किन्तु श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने श्री गुरु हरिराय साहिब को पूर्ण योग्य जान कर यह निर्णय लिया था। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने गुरुगद्दी सौंपते हुए श्री गुरु हरिराय साहिब को आशीर्वाद दिया था कि जो भी आपके विरुद्ध आयेगा वह सफल नहीं होगा। आपको सदैव घुड़सवार सैनिक तैयार रखने होंगे। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का यह आशीर्वाद पूर्णत: फलीभूत हुआ।

श्री गुरु हरिराय साहिब ने अपने गुरुत्व काल में सभी उद्देश्य सफलता सहित प्राप्त किये और सैन्य-बल को भी संगठित रखा। वे स्वभाव से बहुत मिलनसार, शील, संयम धारक और शांतिप्रिय थे। श्री गुरु हरिराय साहिब ने अपने आचार से सिक्खों में गुरबाणी के प्रति प्रेम व समर्पण की भावना उत्पन्न की। गुरु साहिब का अपनी निद्रा और आहार पर पूर्ण नियंत्रण था। वे नियमित रूप से अमृत वेले (बेला) उठ कर परमात्मा का सुमिरन करते। इसमें कभी अवरोध

नहीं उत्पन्न हुआ। आई हुई संगत को दर्शन देते, उनकी शंकाओं का निवारण करते और गुरमति के सिद्धान्त धारण करने को प्रेरित किया करते थे। दोपहर के पश्चात गुरु साहिब तेग-तीर कमान लेकर, घोड़े पर सवार होकर प्राय: शिकार को चले जाया करते थे। शिकार में कोई भी जानवर न मारने का हुक्म था। पशु- पक्षी पकड़ लिये जाते। गुरु साहिब ने कीरतपुर साहिब में एक खुला स्थान बना रखा था, जहां ऐसे पशु-पक्षी लाकर रखे जाते और उनका उचित पालन-पोषण किया जाता था। घायल व रुग्ण जीवों का उपचार भी किया जाता था। यह जीव-दया का आदर्श उदाहरण था। शाम को पुन: दीवान सजता था, जिसमें गुरबाणी का गायन संगत द्वारा किया जाता और गुरु साहिब के उपदेशों से संगत लाभान्वित होती। आपका भोजन सादा होता और अल्प भी।

दयालु श्री गुरु हरिराय साहिब सिक्खों और हर शरणागत की सहायता को सदैव तत्पर रहते थे। अपनी आध्यात्मिक शक्ति से ही गुरु साहिब सिक्खों में मनोबल भर कर उन्हें रोगमुक्त होने का साहस प्रदान किया करते थे। उन्होंने कीरतपुर साहिब में एक दवाखाना भी खोला, जिसमें उपचार के लिये योग्य वैद्य रखे गये थे। दवाखाने में दुर्लभ जड़ी-बूटियों का भी संग्रह किया गया था। यहां सभी लोगों को बिना किसी शुल्क के औषधियां मिलने लगीं और लोग स्वस्थ होने लगे। इससे गुरु-घर के इस दवाखाने की चतुर्दिग प्रतिष्ठा स्थापित हो गई। एक बार तत्कालीन मुगल शासक शाहजहां का बड़ा पुत्र दारा शिकोह बीमार हो गया। कहा जाता है कि छोटे भाई औरंगजेब ने षड्यंत्र कर उसे शेर की मूंछ का बाल धोखे से भोजन में खिला दिया था। बहुत-से उपचार किये गये, किन्तु दारा शिकोह की हालत में कोई सुधार नहीं हुआ, बल्कि बीमारी गंभीर होती गई और वह मरणासन्न अवस्था में पहुंच गया। उसके उपचार के लिये आवश्यक औषधि कहीं नहीं मिली। चारों ओर से निराश शाहजहां को जब श्री गुरु हरिराय साहिब के दवाखाने के बारे में ज्ञात हुआ तो उसने गुरु साहिब से अनुरोध किया। श्री गुरु हरिराय साहिब ने दारा शिकोह के लिये दवा दी और साथ में एक मोती भी देकर, उसे पीस कर खिलाने के लिये कहा। दारा शिकोह गुरु साहिब की दवा से शीघ्र स्वस्थ हो गया। मैकालिफ़ के अनुसार, दवा के लिये स्वयं शाहजहां ने गुरु साहिब को चिट्ठी लिखी थी। स्वस्थ होने के बाद दारा शिकोह गुरु साहिब के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के लिये आया था। श्री गुरु हरिराय साहिब में उसे निर्विकार, सर्वशक्तिमान परमात्मा के दर्शन हुए थे। जिस शाहजहां ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब से वैर कर उन पर चार बार आक्रमण किया था, उसके पुत्र की जान बचाने की आशा निश्चय ही ईश्वरीय गुणों से सम्पन्न श्री गुरु हरिराय

साहिब से ही की जा सकती थी, किसी अन्य से नहीं। इन गुणों की नींव श्री गुरु नानक साहिब ने रखी थी और जीवन के बाईस अमूल्य वर्ष धर्म प्रचार-यात्राओं में व्यतीत कर, मानवता का उद्धार किया था।

धर्म को मानवीय मूल्यों से जोड़कर सिक्ख गुरु साहिबान ने जन-जन पर महान उपकार किया था और पीड़ित, उपेक्षित, त्रस्त एवं शोषित को सम्मानपूर्वक जीवन जीने के प्रति आशान्वित किया था। श्री गुरु हरिराय साहिब के सरल और सहज उपदेश सिक्खों के मन में सीधे उतरते थे और उन्हें गुणी जीवन की राह दर्शाते थे। एक बार किसी सिक्ख ने पूछा कि श्रेष्ठ गृहस्थ जीवन का लक्षण क्या है ? गुरु साहिब ने कहा, प्रतिकूल समय में भी यदि कोई अतिथि घर पर आ जाये तो पूर्ण प्रेम से उसका स्वागत, सत्कार करना, अच्छे गृहस्थी होने का प्रतीक है। गुरु साहिब संगत को निम्न उपदेश बार-बार दिया करते थे : –

१- सदैव परमात्मा पर विश्वास रखो!
२- शुभ कर्मों हेतु तत्पर रहो!
३- कर्म, कमाई सच्ची हो!
४- किसी को भी मंदा मत कहो!
५- किसी का दिल दुखाना हराम जानो!
६- माता-पिता की सेवा भी भक्ति है!
७- दसवंध जरूर निकालो!

यह उपदेश वास्तव में सिक्ख पंथ के मूल सिद्धांतों का प्रतिनिधित्व करने वाले थे। गुरु साहिबान का उद्देश्य प्रत्येक मनुष्य को धर्म और अध्यात्म के साथ सीधे जोड़ना था, इसलिये उन्होंने अध्यात्म के गूढ़तम सिद्धांतों को अति सरलीकृत करने का महान उपकार किया, ताकि उनकी ग्राह्यता निर्बाध हो। गुरबाणी का पठन किसी सामान्य व्यक्ति के लिये भी सार तत्वों से वैसे ही मंडित करता है जैसे किसी उच्च विद्वान को। श्री गुरु हरिराय साहिब की निरंतर प्रेरणा रहती थी कि सिक्ख नित्य गुरबाणी का पठन व गायन करें। एक बार किसी सिक्ख ने उत्सुकता प्रकट की कि गुरबाणी का गायन कैसे अन्तर्मन और जीवन को प्रभावित करता है? गुरु साहिब चुप रहे। अगले दिन जब श्री गुरु हरिराय साहिब शिकार के लिये जा रहे थे तो साथ में वही संगत थी, जिसने प्रश्न किया था। मार्ग में मिट्टी का वह बर्तन टूटा पड़ा था, जिसका उपयोग दूध, दही मथ कर घी निकालने के लिये किया जाता था। उस बर्तन में घी रच-बस गया था। उस समय उस बर्तन पर सूर्य की किरणें पड़ रही थीं, जिससे बर्तन में रचा हुआ घी पिघल कर चमकने लगा था। गुरु साहिब ने समझाते हुए कहा कि गुरबाणी का प्रभाव भी ऐसा ही है। वह कब तन, मन में रच बस जाती है, पता ही नहीं चलता। समय आने पर वह सिक्ख की मर्यादा की रक्षा हेतु प्रकट होती है और संसार में उसकी शोभा बढ़ाती है, जैसे यह बर्तन चमक रहा है।

सिक्ख पंथ के सिद्धांतों व गुरबाणी के प्रचार-

प्रसार के लिये श्री गुरु हरिराय साहिब जहां स्वयं यत्नशील थे, वहां उन्होंने संगठनात्मक आधार सुदृढ़ करने के लिये तीन प्रचार-केंद्र भी स्थापित किये जिनका उत्तरदायित्व क्रमशः भाई सुथरे शाह जी, भाई भगत भगवान जी और भाई संगतिआ जी को सौंपा। इन केन्द्रों को 'बख़्शिश' कहा गया। गुरु साहिब ने व्यापक प्रचार दौरे भी किये, जिससे सिक्ख अपने कर्त्तव्यों के प्रति अधिक सचेत हुए। पूरे क्षेत्र में श्री गुरु हरिराय साहिब की प्रतिष्ठा का विस्तार हुआ और गुरु-घर की शोभा बढ़ने लगी। इससे पहाड़ी राजाओं में ईर्ष्या पैदा हो गई। गुरु साहिब के दरबार में टैक्स वसूलने की नीयत से भारी सेना लेकर कीरतपुर साहिब पहुंचे दो राजाओं को गुरु साहिब ने विनम्रता से समझाया कि उनके पास देने को नाम-धन है। उन दो पहाड़ी राजाओं को अपनी भूल का एहसास हो गया। गुरु साहिब ने उन्हें उपदेश दिया कि अहंकार का त्याग करो, कल्याणकारी शासन करो, प्रजा को दुख मत दो, पर-तन तथा पर-धन का त्याग करो, मदिरा- पान मत करो, प्रजा की शिकायतें सुन उन्हें दूर करो! गुरु साहिब ने यह भी कहा कि जो राजा प्रजा को दुखी करता है वह अपनी जड़ों पर स्वयं कुल्हाड़ी मारता है। गुरु साहिब ने कहा कि लोगों के भले के लिये तालाब, कुएं, पुल, पाठशाला और धर्मशाला बनवायें और धर्म को प्रफुल्लित करें। श्री गुरु हरिराय साहिब ने अपने उपदेशों के माध्यम से एक आदर्श राज्य के आधार-स्तम्भ निरूपित किये, जो वर्तमान संदर्भों में भी प्रासंगिक हैं। गुरबाणी में कहा गया है कि योग्य व्यक्ति ही राज-सिंहासन पर बैठे। योग्य राजा के गुण क्या हों, इसे श्री गुरु हरिराय साहिब ने प्रकट किया था। गुरु साहिब की चिंता थी कि प्रजा सुरक्षित और सुखी रहे।

श्री गुरु हरिराय साहिब ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की परंपरा का पालन करते हुए सेना रखी हुई थी जो सदैव तैयार रहती थी। यद्यपि कोई ऐसा अवसर नहीं आया कि गुरु साहिब को कोई युद्ध करना पड़ा हो, किन्तु जब बल-प्रयोग का अवसर आया तो गुरु साहिब ने अत्यंत संयम और सूझ-बूझ से काम लिया, जिससे मनोरथ भी सिद्ध हो गया और कोई संघर्ष भी नहीं हुआ।

हुआ यूं कि अपने पिता शाहजहां के विरुद्ध बगावत कर औरंगजेब तख्त पर काबिज होना चाहता था। दारा शिकोह भी तख्त का प्रबल दावेदार था, किन्तु औरंगजेब की रणनीति के आगे वह पस्त होता गया। दारा शिकोह ने मैदान छोड़ दिया और लाहौर की ओर भागने लगा। औरंगजेब की सेना उसका पीछा कर रही थी। गोइंदवाल साहिब पहुंच कर दारा शिकोह ने श्री गुरु हरिराय साहिब से सहायता मांगी। गुरु साहिब ने अपनी सेना को ब्यास नदी के तट पर तैनात कर दिया। सिक्ख सेना ने वहां की सभी नावों को अपने कब्जे में ले लिया, जिससे

औरंगजेब की सेना उस रात नदी पार न कर सकी। इसका लाभ उठा कर दारा शिकोह तेजी से सुरक्षित लाहौर पहुंच गया। यह बात अलग है कि वहां उसे विश्वासघात का शिकार होना पड़ा। उसे कैद कर औरंगजेब के सामने पेश किया गया और औरंगजेब ने उसे कत्ल करा दिया।

औरंगजेब ने दिल्ली को अपनी राजधानी बनाया। वह गुरु-घर के प्रति पूर्वाग्रह से ग्रसित था। इसका लाभ उठा कर जब उसके पास गुरु-घर से ईर्ष्या रखने वालों ने झूठी शिकायतें कीं तो उसने श्री गुरु हरिराय साहिब को दिल्ली आने के लिये पत्र लिख कर आमंत्रित किया। गुरु साहिब ने औरंगजेब का आमंत्रण अस्वीकार कर दिया। औरंगजेब ने पुन: पत्र भेजा तो गुरु साहिब ने संगत से विचार-विमर्श के पश्चात अपने बड़े पुत्र रामराय को लायक जानकर दिल्ली भेजने का निर्णय किया, ताकि श्री गुरु नानक साहिब के निर्मल पंथ के प्रति औरंगजेब की सारी शंकाओं का निवारण किया जा सके। गुरु साहिब ने रामराय को विशेष निर्देश दिये कि वह किसी भी तरह के राजसी प्रभाव अथवा भय में न आये और निर्भीकता व स्पष्टता से सारे उत्तर दे। कोई करामात न दिखाये, क्योंकि यह ईश्वर के विधान के विरुद्ध है। रामराय दिल्ली पहुँचने के बाद गुरु साहिब की हिदायतें भूल गया और औरंगजेब के दरबार में करामातें दिखा कर उसे प्रभावित करने में लग गया। एक दिन औरंगजेब ने गुरबाणी के श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पन्ना ४६६ पर अंकित गुरु नानक साहिब के एक शबद "मिटी मुसलमान की पेड़ै पई कुम्हिआर" के बारे में पूछा तो रामराय घबरा गया और उसने कह दिया कि वास्तव में शब्द 'मुसलमान' नहीं 'बेईमान' है। श्री गुरु हरिराय साहिब तक जब यह समाचार पहुंचा तो वे बहुत आहत हुए और अपने पुत्र रामराय से सदैव के लिये संबंध तोड़ लिये। गुरबाणी और गुरु-घर के आदर्शों का तनिक भी उल्लंघन, निरादर उन्हें स्वीकार नहीं था।

श्री गुरु हरिराय साहिब ने अपने जीवन के अंतिम काल में श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी को गुरुआई सौंपी और ज्योति-जोत समा गये। श्री गुरु हरिराय साहिब के काल को सिक्ख इतिहास में शांति और संगठन के काल के रूप में जाना जाता है। किसी भी धर्म का विकास विभिन्न चरणों में से गुजरते हुए होता है। प्रत्येक चरण के अपने मानदंड और परीक्षायें होती हैं। किसी भी चरण का कोई विचलन भविष्य की यात्रा को बाधित और भ्रमित कर देता है। श्री गुरु हरिराय साहिब का गुरु-काल अपने समय की कसौटी पर पूरा खरा उतरा और तभी आगे चल कर 'खालसा' के सृजन का मार्ग प्रशस्त हुआ था।

भक्त रविदास जी

*–स. परमजीत सिंघ सुचिंतन**

भक्त रविदास जी के जन्म के समय, सारा समाज जातियों, वर्ण-भेद, कर्म-कांडों, पाखंडों तथा आडंबरों आदि कुरीतियों में बुरी तरह से जकड़ा हुआ था। एक ओर, आम लोग मुगल शासकों की गुलामी कर रहे थे, जिस कारण धार्मिक आज़ादी नाम की कोई चीज नहीं रह गई थी। वहीं दूसरी ओर, ब्राह्मणवादी सोच व विचारधारा के लोग तथाकथित पिछड़ी व अति पिछड़ी एवं नीची जातियों के लोगों को धार्मिक तथा सामाजिक बराबरी नहीं देते थे। मुगल शासक व ब्राह्मण अपनी-अपनी प्रभु-सत्ता कायम रखने के लिए जनसाधारण को बुरी तरह से लूट रहे थे। तथाकथित पिछड़ी और नीची जातियों से संबंधित लोगों के पास विद्या प्राप्त करने का अधिकार नहीं था। इन लोगों को आरंभिक विद्या भी नहीं दी जाती थी। इन्हें पूजा-पाठ करने या भजन-बंदगी करने की तथा मन्दिरों में जाने की अनुमति नहीं थी। इनके साथ जानवरों से भी बुरा व्यवहार किया जाता था। इन्हें साझे कुएं से पानी लेने की और पानी पीने की इज़ाजत नहीं थी। तथाकथित उच्च जातियों के लोग, इन नीची जातियों के लोगों के घर का जल भी ग्रहण नहीं किया करते थे। गांवों में व कसबों में इन तथाकथित नीची जातियों वाले लोगों की बस्तियां अलग से बनाई जाती थीं और इन लोगों को उच्च जातियों वाले लोगों के साथ संबंध रखने की अनुमति नहीं थी। इन लोगों को कई बार इतनी मानसिक पीड़ा दी जाती थी कि इन बस्तियों का नाम ही 'नीच बस्ती' रख दिया जाता था, ताकि समय-समय पर, इन परिवारों को, इनकी तथाकथित पिछड़ी तथा नीची जातियों का एहसास होता रहे। विकास, शिक्षा तथा अन्य सुविधाएं देनी तो बहुत दूर की बात थी, इन्हें छोटी-छोटी बातों के लिए भी प्रताड़ित किया जाता था, दुत्कारा जाता था, नकारा जाता था तथा इनका तिरस्कार किया जाता था। यदि कहीं तथाकथित नीची जाति वाले किसी व्यक्ति की परछाईं किसी उच्च जाति वाले व्यक्ति पर पड़ जाती थी तो यह समझा जाता था कि उच्च जाति वाला व्यक्ति 'अपवित्र' हो गया है, इसलिए उसे फिर से स्नान करके, अपने आप को 'शुद्ध' व 'पवित्र' करना पड़ता था।

तथाकथित पिछड़ी व नीची जातियों के लोगों को न तो किसी धार्मिक ग्रन्थ का पाठ करने की अनुमति थी और न ही पाठ आदि सुनने की। यहां तक कि यदि किसी तथाकथित नीची जाति वाले किसी व्यक्ति ने किसी धार्मिक ग्रन्थ का पाठ सुन लिया या कर लिया तो उसके कानों में लोहा ढाल कर डाल दिया जाता था और उसकी जीभ काट दी जाती थी। एक वर्ग विशेष ने बहुत योजनाबद्ध

** ७६. फेस-३, अर्बन अस्टेट, दुग्गरी, लुधियाना– १४१०१३, फोन: ९७७९१-२४५००*

तरीके से समाज में वर्ण-भेद स्थापित किया हुआ था। आध्यात्मिकता और उच्च विद्या का अधिकार, एक वर्ग विशेष के परिवारों में पैदा हुए बच्चों के पास ही होता था। तथाकथित पिछड़ी और नीची जातियों से सम्बन्धित परिवारों के बच्चों को पूजा-पाठ करने का, विद्या प्राप्त करने का तथा व्यापार आदि करने का अधिकार प्राप्त नहीं था।

विडंबन की बात है कि अकाल पुरख द्वारा बनाए हुए मनुष्य ने, मनुष्य और मनुष्य के बीच इतनी बड़ी खाई बना रखी थी कि इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। उस समय का पुजारी वर्ग तथाकथित पिछड़ी व नीची जातियों से सम्बन्धित लोगों को अपवित्र मानता था। ब्राह्मण और पंडित, धर्म-ग्रंथों की अपने मन की इच्छा के अनुसार व्याख्या करते थे तथा लोगों को बार-बार यह दृढ़ करवाते थे कि तथाकथित पिछड़ियों और नीची जातियों के लोगों के पास बराबरी के अधिकार नहीं हैं। यूं इन तथाकथित पिछड़ियों और नीची जातियों के लोगों को दुत्कारा व तिरस्कारा जाता था।

भक्त रविदास जी का जन्म : ऐसे समय और इस तरह के हालातों में भक्त रविदास जी का जन्म, पिता श्री संतोख दास जी तथा माता कलसी देवी जी के गृह में माघ सुदी १५, संवत् १४३३ (सन् १३७६ ई.) को पूर्णमाशी वाले दिन काशी (बनारस, वाराणसी) में हुआ। कुछ इतिहासकार व विद्वान, भक्त रविदास जी के पिता का नाम रघु और माता जी का नाम धुरबिनीआ लिखते हैं। भक्त रविदास जी के जन्म-सम्बन्धी एक कवि की लिखी ये पंक्तियां बहुत प्रसिद्ध हैं :

चौदह सौ तैंतीस की माघ सुदी पंद्रास।
दु:खियों के कल्याण हित, प्रगटे श्री रविदास।

भक्त रविदास जी के जन्म-स्थान के बारे में, इतिहासकारों और विद्वानों के अलग-अलग विचार हैं। कुछ इतिहासकार और विद्वान, भक्त रविदास जी का जन्म सीर गोवर्धनपुर (काशी) में लिखा हुआ बताते हैं जबकि कुछ इतिहासकार और विद्वान लिखते हैं कि भक्त रविदास जी का जन्म नई बस्ती, मंडूर (अब मंडुआडीह), काशी में हुआ था। सीर गोवर्धनपुर में भी भक्त रविदास जी के जन्म से सम्बन्धित दो अलग-अलग स्थान बने हुए हैं। एक स्थान की सेवा-संभाल बाबा निरंजन दास जी, सचखंड बल्लां (जलंधर) वाले कर रहे हैं, जबकि दूसरे स्थान की सेवा-संभाल महंत आचार्य भारत भूषण जी कर रहे हैं। मंडुआडीह में, नई बस्ती वाले जन्म-स्थान की सेवा-संभाल कुछ स्थानीय परिवार कर रहे हैं।

यह बात तो ठीक है कि भक्त रविदास जी के जन्म-स्थान के बारे में इतिहासकारों और विद्वानों के अलग-अलग विचार हैं लेकिन इस बात के लिए सभी इतिहासकार व विद्वान एकमत हैं कि भक्त रविदास जी का जन्म काशी (बनारस) में या इसके आस-पास ही हुआ था। भक्त रविदास जी अपने परिवार व अपने जन्म-स्थान के बारे में संकेत देते हुए लिखते हैं :

मेरी जाति कुट बांढला ढोर
ढोवंता नितहि बानारसी आस पासा।।

(श्री गुरु ग्रंथ साहिब, पन्ना १२९३)

भावार्थ : भक्त रविदास जी कहते हैं कि मेरी जाति के लोग भाव कि चमड़ा कूटने और काटने वाले लोग अर्थात् मरे हुए पशुओं की चमड़ी

(खाल) उतार कर, उसे काटने वाले तथा नित्यप्रति मरे हुए पशुओं को ढोने वाले लोग, बनारस के आस-पास के इलाकों में ही रहते हैं।

इन पंक्तियों के लेखक को मार्च २०२० ई. में काशी-यात्रा के दौरान भक्त रविदास जी के जन्म से सम्बन्धित तीनों स्थानों के दर्शन करने का तथा इन स्थानों का प्रबन्ध कर रहे प्रबंधकों से वार्तालाप करने का सौभाग्यशाली मौका मिला।

आरम्भिक विद्या : भक्त रविदास जी की आयु अभी पांच वर्ष की थी कि भक्त रविदास जी के माता जी अकाल प्रस्थान कर गए। उस समय के सामाजिक और धार्मिक हालातों के कारण, भक्त रविदास जी आरम्भिक विद्या भी प्राप्त नहीं कर सके।

बचपन : भक्त रविदास जी बचपन से ही वैराग्य में रहते थे। आप जी सदैव ही साधु-संतों की संगत करके खुश रहते थे। आपके पिता जी चाहते थे कि भक्त रविदास जी पैतृक व्यवसाय (पशुओं की खाल से जूते बनाना और जूते ठीक करना) सीख कर, काम-काज में हाथ बटाएं। परन्तु, भक्त रविदास जी का अधिकांश समय ज्ञान-ध्यान की बातों और संतों-महापुरुषों की संगति करने में ही व्यतीत हो जाता था। फिर भी, भक्त रविदास जी भजन-बंदगी व अन्य सेवा-कार्यों में से समय निकाल कर अपने पिता जी के काम-काज में हाथ बंटाते थे।

किरत करनी : धीरे-धीरे भक्त रविदास जी ने, अपने पैतृक व्यवसाय को अपनी किरत (श्रम, आजीविका) के रूप में अपना लिया। भक्त रविदास जी ने किरत की महत्ता को दृढ़ करवाने के लिए किरत करना जारी रखा। आप जी अपने जीवन के अंतिम समय तक किरत करते रहे।

भक्त रविदास जी, सीर गोवर्धनपुर में इमली के पेड़ के नीचे बैठ कर अपनी किरत करते थे। आप जी किरत करते हुए भी अकाल पुरख की भजन-बंदगी में लीन रहते थे। आप जी ने लंबा समय, इसी इमली के पेड़ के नीचे व्यतीत किया था। इन पंक्तियों के लेखक को मार्च २०२० ई. में काशी-यात्रा के दौरान इमली के इस पेड़ के दर्शन करने का सौभाग्यशाली मौका भी मिला था।

भक्त रविदास जी ने अपनी किरत के द्वारा समूचे विश्व को यह संदेश भी दिया कि कोई भी किरत बड़ी या छोटी नहीं होती। ईमानदारी से की गई कोई छोटी किरत भी अकाल पुरख की पूजा के तुल्य है। भक्त रविदास जी ने समूचे विश्व को यह संदेश भी दिया कि सच्ची-सुच्ची किरत करके और अकाल पुरख की भजन-बंदगी करके आत्मिक ऊंचाइयों को छुआ जा सकता है तथा अपने जीवन का मनोरथ प्राप्त किया जा सकता है।

विवाह एवं संतान : कुछ समय के बाद, भक्त रविदास जी की सगाई मिर्ज़ापुर के एक परिवार की लड़की, माता लोना देवी जी के साथ कर दी गई तथा जल्दी ही विवाह की तैयारियां भी शुरू कर दी गईं। विवाह के बाद, माता लोना देवी जी अपने ससुराल आ गईं। अच्छी बात यह थी कि माता लोना देवी जी भी भक्त रविदास जी की तरह ही धार्मिक विचार रखती थीं। उन्होंने ससुराल में आकर, जहां एक ओर घर का सारा काम-काज संभाल लिया, वहीं दूसरी ओर वे भी भक्त रविदास जी की तरह ही भजन-बंदगी में लीन रहने लगीं।

इससे घर का माहौल और भी खुशनुमा व पवित्र हो गया था। माता लोना देवी जी हर समय घर के काम-काज के साथ-साथ सेवा-कार्यों के लिए भी तत्पर रहती थीं। उन्हें इस बात का एहसास हो गया था कि उनके पति (भक्त रविदास जी) अपने परिवार या कुटुम्ब का ही नहीं अपितु समूचे समाज का भला करने के लिए आए हैं और वे समाज में फैली हुई कुरीतियों व अज्ञानता के अंधेरे को दूर कर समूचे संसार के अन्दर, अकाल पुरख के नाम रूपी प्रकाश को फैलाएंगे। समय आने पर, भक्त रविदास जी तथा माता लोना देवी जी के गृह में एक बालक ने जन्म लिया, जिसका नाम 'विजय दास' रखा गया।

गुरु-दीक्षा : काशी में भक्त रामानंद जी की बहुत मान्यता थी। दूर-दूर से लोग आकर भक्त रामानंद जी से उपदेश सुनते थे और गुरु-दीक्षा प्राप्त कर अकाल पुरख की भजन-बंदगी किया करते थे। भक्त रामानंद जी की गिनती भक्ति-काल के गिने-चुने भक्तों व महापुरुषों में होती है। आप बहुत उदारचित्त थे एवं तथाकथित ऊंची व नीची जातियों का भ्रम नहीं किया करते थे। इन्हीं कारणों की वजह से भक्त रविदास जी ने भक्त रामानंद जी से गुरु-दीक्षा प्राप्त की।

जिस समाज में भक्त रविदास जी का जन्म हुआ था, उस समाज में अज्ञानता व गरीबी उस समाज की पहचान बन चुके थे। भक्त रविदास जी अपने जीवन-काल में समाज में क्रांतिकारी बदलाव लाकर, समाज का स्वरूप बदल देना चाहते थे, इसलिए भक्त रविदास जी ने विवेक-बुद्धि रूपी दीपक को जगाने के लिए समाज को प्रेरित किया, जिससे समाज के अंदर जागरूकता आई और ज्ञानवान बनने की नई किरण पैदा हुई। जिस समाज को पढ़ने-लिखने की मनाही थी, वही समाज अज्ञानता के अंधेरे को दूर करने के लिए लामबंद हो रहा था।

भक्त रविदास जी अकाल पुरख की भजन-बंदगी के प्रभाव के कारण, समाज में प्रसिद्धि प्राप्त कर चुके थे। तथाकथित नीची जाति के परिवार में पैदा हुए भक्त रविदास जी का ऐसा प्रभाव देख कर, तथाकथित ऊंची जातियों के कुछ अज्ञानी लोगों ने भक्त रविदास जी का विरोध करना शुरू कर दिया। उनके लिए यह असहनीय था कि तथाकथित नीची जाति का कोई 'शूद्र' व्यक्ति सत्य के मार्ग पर चल रहा है और अन्य लोगों को अकाल पुरख की भजन-बंदगी करने का उपदेश दे रहा है। इन्हीं कारणों की वजह से बहुत-से तथाकथित ऊंची जातियों के लोगों ने भक्त रविदास जी का विरोध करना शुरू कर दिया।

भक्त रविदास जी तो समूची मानवता को ईश्वरीय संदेश दे रहे थे, परन्तु काशी की धरती, जहां कर्मकांडों, पाखंडों व आडंबरों का बोलबाला था, पर रहने वाले पुजारियों को भक्त रविदास जी की मानवतावादी सोच अच्छी नहीं लगती थी, इसलिए इन पुजारियों ने भक्त रविदास जी का विरोध करना शुरू कर दिया। भक्त रविदास जी को तथाकथित नीची जाति से संबंधित होने के कारण कहा जाता था कि आप अपने पैतृक व्यवसाय पर ध्यान दो। परंतु, भक्त रविदास जी ने दृढ़ निश्चय किया हुआ था कि समाज में फैली हुई धार्मिक व सामाजिक कुरीतियों को जड़ से ही खत्म कर देना है।

भक्त रविदास जी की उपमा बढ़ती देख कर, आपके विरोधी आगबबूला होने लगे। उन्हें यह किसी भी तरह से स्वीकार्य नहीं था कि तथाकथित नीची जाति के भक्त रविदास जी स्वयं भी अकाल पुरख की भजन-बंदगी करें व दूसरों को भी अकाल पुरख की भजन-बंदगी करने की प्रेरणा करें।

कुछ समय बाद, भक्त रविदास जी ने अपनी कुटिया के अंदर, रोज़ाना सत्संग करना शुरू कर दिया। सत्संग से प्रभावित होकर, बहुत सारे सत्संगी भक्त रविदास जी की कुटिया में पहुंच कर सत्संग का लाभ लेने लग गए। सत्संगी-जन, भक्त रविदास जी के मुख से आध्यात्मिकता के रहस्यवादी प्रवचन श्रवण करके, निहाल (आनंदित) हो जाते थे। भक्त रविदास जी सत्संगियों को यह उपदेश दिया करते थे कि कोई भी व्यक्ति जन्म के कारण छोटा या बड़ा नहीं होता। व्यक्ति के आंतरिक गुण यह निर्धारित करते हैं कि वह व्यक्ति बड़ा है या छोटा। भक्त रविदास जी के विचारों से प्रभावित होकर, तथाकथित नीची जातियों से सम्बन्धित लोगों के साथ-साथ तथाकथित उच्च जातियों के लोगों ने भी भक्त रविदास जी को अपना गुरु धारण कर लिया। यही कारण था कि आपको अपने विरोधियों के सख़्त विरोध का सामना करना पड़ा था।

भक्त कबीर जी के साथ ज्ञान-गोष्ठी : भक्त रविदास जी व भक्त कबीर जी के बीच गहरी मित्रता थी। दोनों ही एक दूसरे का बहुत सम्मान किया करते थे। दोनों की विचारधारा भी एक थी। भक्त रविदास जी और भक्त कबीर जी निर्गुण व निराकार पारब्रह्म के उपासक थे। दोनों ही मूर्ति-पूजा, तीर्थ-स्नान, व्रत तथा अन्य धार्मिक कर्म-कांड, पाखंड के विरुद्ध थे। दोनों ही जात-पाँत और वर्ण-व्यवस्था के भी विरोधी थे। दोनों ही तथाकथित नीची जाति से सम्बन्धित परिवारों में से थे। भक्त रविदास जी व भक्त कबीर जी गुरुभाई भी थे, क्योंकि दोनों ने ही भक्त रामानंद जी से गुरु-दीक्षा ली हुई थी।

भक्त रविदास जी व भक्त कबीर जी दोनों काशी में ही रहते थे, इसलिए प्राय: किसी न किसी सत्संग में इक्कठे हो जाया करते थे। कई बार भक्त रविदास जी सत्संग करने के लिए या गोष्ठी करने के लिए भक्त कबीर जी के पास चले जाते थे या फिर भक्त कबीर जी, भक्त रविदास जी के पास आ जाते थे। भक्ति-काल में जितने भी भक्त या महापुरुष हुए हैं, उनमें से भक्त रविदास जी व भक्त कबीर जी का अपना एक विशिष्ट स्थान है।

समकालीन भक्तों का प्रभाव : भक्त रविदास जी समकालीन और पूर्वकालीन भक्तों, जैसे कि भक्त नामदेव जी, भक्त कबीर जी, भक्त त्रिलोचन जी, भक्त सधना जी और भक्त सैण जी के जीवन से बहुत प्रभावित थे। भक्त रविदास जी ने इस सम्बन्ध में अपनी बाणी में यूं उच्चारण किया है :

नामदेव कबीरु तिलोचनु सधना सैनु तरै।।

(श्री गुरु ग्रंथ साहिब पन्ना ११०६)

तथाकथित नीची जाति पर गर्व करना : काशी की धरती ब्राह्मणवादी सभ्याचार का प्रमुख केंद्र थी। इस धरती से भक्तिकालीन लहर का प्रफुल्लित होना किसी चमत्कार से कम नहीं था। इस लहर के दोनों प्रमुख भक्त (भक्त रविदास जी और भक्त कबीर जी) तथाकथित नीची व पिछड़ी जाति से सम्बन्धित थे। इन तथाकथित नीची व पिछड़ी

जातियों के लोगों का समाज, तथाकथित उच्च जातियों वाले लोगों के हाथों, सदियों से ज़ुल्म सहता आ रहा था। भक्त रविदास जी ने इन दबे-कुचले लोगों के अंदर से तथाकथित नीची व पिछड़ी जातियों की हीन भावना को निकालने का प्रयास किया। भक्त रविदास जी ने अपनी तथाकथित नीची व पिछड़ी जाति को किसी हीन भावना के कारण छिपाया नहीं, अपितु अपनी जाति पर गर्व करते हुए, दबे-कुचले लोगों के अंदर स्वाभिमान की भावना को जागृत किया। भक्त रविदास जी ने अपनी बाणी में भी अपनी जाति (चमार) का बार-बार उल्लेख किया है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में भक्त रविदास जी द्वारा उच्चरित बाणी में इस जातिसूचक शब्द का उल्लेख यूं किया गया है :

—कहि रविदास खलास चमारा।।

(श्री गुरु ग्रंथ साहिब पन्ना ३४५)

—मेरे रमईए रंगु मजीठ का
कहु रविदास चमार।।

(श्री गुरु ग्रंथ साहिब, पन्ना ३४६)

—प्रेम भगति कै कारणै कहु रविदास चमार।।

(श्री गुरु ग्रंथ साहिब, पन्ना ३४६)

—राजा राम की सेव न कीनी
कहि रविदास चमारा।।

(श्री गुरु ग्रंथ साहिब, पन्ना ४८६)

—तुम सरनागति राजा राम चंद
कहि रविदास चमारा।।

(श्री गुरु ग्रंथ साहिब, पन्ना ६५९)

—चमरटा गांठि न जनई।।

(श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी, पन्ना ६५९)

—नागर जनां मेरी जाति बिखिआत चंमारं।।

(श्री गुरु ग्रंथ साहिब, पन्ना १२९३)

इस प्रकार से भक्त रविदास जी ने अपनी बाणी में अपनी जाति का उल्लेख करके, तथाकथित नीची व पिछड़ी जातियों वाले लोगों को अपने अंदर से हीन भावना ख़त्म करके गर्व से जीना सिखाया।

साधु और पारस : एक बार एक साधु आपकी उपमा सुनकर आपके पास आया। भक्त रविदास जी ने इस साधु का बहुत सम्मान किया और उसे स्वादिष्ट भोजन छकाया। फिर उस साधु के साथ बैठ कर सत्संग किया। सत्संग के बाद भक्त रविदास जी ने उस साधु के साथ ज्ञान-चर्चा की। कुछ समय बाद वह साधु विदा होने लगा तो उसने भक्त रविदास जी से कहा कि "आपके पास कोई धन-दौलत या कोई अन्य कीमती वस्तु नज़र नहीं आ रही। यूं लगता है कि आप गरीबी वाला जीवन व्यतीत कर रहे हो। मेरे पास एक पारस है। इस पारस को लोहे की जिस वस्तु से छुओगे, वह लोहे की वस्तु भी सोने की बन जाएगी। फिर आप उस वस्तु को बाजार में बेच कर, बहुत सारा धन ला सकते हो, जिससे आपकी गरीबी दूर हो जाएगी।" यह सुनकर भक्त रविदास जी कहने लगे कि "मेरे लिए तो अकाल पुरख का नाम ही असली पारस है। मैं आपके इस पारस को पाकर क्या करूंगा?" यह कह कर भक्त रविदास जी ने उस साधु से पारस लेने से इन्कार कर दिया।

उस साधु ने एक बार फिर से भक्त रविदास जी को वह पारस रख लेने के लिए कहा। भक्त रविदास जी के बार-बार मना करने के बावजूद वह साधु भक्त रविदास जी को पारस रखने के लिए जिद

करने लगा। आख़िर, साधु ने अपनी गठड़ी में से पारस निकाला और भक्त रविदास जी से कहने लगा कि "आप इस पारस को मेरी अमानत समझ कर रख लो! मैं यात्रा पर जा रहा हूं। यात्रा से वापिस आकर, मैं यह पारस आपसे वापिस ले लूंगा!" भक्त रविदास जी कहने लगे कि "इस कुटिया में जहां आप पारस रखना चाहें, रख दें! जब वापिस आओगे, वहीं से उठा लेना!" उस साधु ने पारस को कुटिया की छत में टिका कर रख दिया और भक्त रविदास जी को बता दिया कि पारस यहां रख दिया है।

उस साधु ने मन में यह सोचा कि भक्त रविदास जी मेरे सामने पारस लेने से संकोच कर रहे हैं, परंतु मुझे पूरा यकीन है कि मेरे जाने के बाद भक्त रविदास जी इस पारस की सहायता से अपनी गरीबी दूर कर लेंगे, क्योंकि धन-पदार्थों की ज़रूरत तो सभी को पड़ती है। धन-पदार्थों के बिना तो किसी का गुज़ारा नहीं हो सकता। यही सोच कर, वह साधु अपने रास्ते चल दिया।

लगभग एक वर्ष बाद वह साधु अपनी यात्रा पूरी करके वापिस आया तो उसके मन में विचार आया कि भक्त रविदास जी से मिलकर, उनका हाल-चाल पूछ आता हूं और पारस की मदद से उनका नया बना हुआ महल भी देख आता हूं। यही सोचते हुए वह साधु भक्त रविदास जी के घर पहुंच गया। भक्त रविदास जी का घर देख कर, उसकी हैरानी की कोई सीमा न रही। उस साधु ने देखा कि भक्त रविदास जी जिस छोटी-सी कुटिया में पहले रहते थे, आज भी उसी कुटिया में रह रहे हैं।

उस साधु ने भक्त रविदास जी से पूछा कि "आपने धन-दौलत प्राप्त करने के लिए पारस की मदद क्यों नहीं ली?" भक्त रविदास जी कहने लगे कि "मैंने तो आपको तभी बोल दिया था कि यह पारस हमारे लिए पत्थर के समान है। हमारे लिए तो उस अकाल पुरख की भजन-बंदगी ही असली पारस है।" भक्त रविदास जी से ज्ञान की बातें सुनकर वह साधु हैरान भी हुआ और निहाल भी। फिर वह साधु कहने लगा कि "वह पारस कहां रखा है? मुझे मेरा पारस वापिस कर दो!" भक्त रविदास जी ने बेपरवाही से जवाब देते हुए कहा कि "वह पारस जहां आप रख कर गए थे, वहीं पर रखा होगा।" साधु ने कुटिया की छत के उस हिस्से में पारस टटोला, जहां पर वह रख कर गया था। साधु यह देखकर बहुत हैरान हुआ कि पारस तो वहीं रखा हुआ है, जहां वह स्वयं रख कर गया था। इस घटना के बाद वह साधु, भक्त रविदास जी का शिष्य बन गया।

गंगा को कसीरा भेंट करना : एक बार कुम्भ के अवसर पर पंडित गंगा राम के नेतृत्व में कुछ संगी-साथी गंगा-स्नान करने के लिए जा रहे थे। गंगा-स्नान करने के लिए जाते समय, ये लोग रास्ते में भक्त रविदास जी के पास रुके। भक्त रविदास जी के यह पूछने पर कि "कहां जा रहे हो", पंडित गंगा राम कहने लगा कि "कुंभ का मेला लगा हुआ है। इस अवसर पर गंगा-स्नान करने की बहुत महत्ता है, इसलिए हम लोग गंगा-स्नान करने के लिए जा रहे हैं। आप भी हमारे साथ चलो! बहुत शुभ अवसर है। इस अवसर पर गंगा-स्नान करने का बहुत बड़ा महत्त्व है। आप भी गंगा-स्नान करके अपना जीवन सफल कर लो!" भक्त रविदास जी कहने लगे कि

"मन चंगा तो कठौती में गंगा।" अर्थात् "यदि मन पवित्र है तो इस कठौती (मिट्टी के बर्तन) में ही गंगा है।" पंडित गंगा राम के बार-बार कहने पर भक्त रविदास जी ने पंडित गंगा राम को एक कसीरा (अघेला) दिया और कहा कि "मेरी ओर से यह कसीरा गंगा को भेंट कर देना। लेकिन एक शर्त है, यह कसीरा गंगा को तभी भेंट करना यदि गंगा हाथ बाहर निकाल कर, इस भेंट को स्वीकार करे, अन्यथा आप यह कसीरा वापिस ले आना!"

पंडित गंगा राम व उसके साथी बहुत हैरान हुए और सोचने लगे कि क्या कभी ऐसे भी हुआ होगा कि गंगा ने हाथ बाहर निकाल कर किसी की भेंट स्वीकार की हो। ये लोग सोच रहे थे कि हमें गंगा-स्नान करने के लिए जाते हुए इतने वर्ष हो गए हैं, परन्तु आज तक ऐसा नहीं हुआ। हमने तो कभी देखा नहीं कि गंगा ने हाथ बाहर निकाल कर कभी किसी की भेंट स्वीकार की हो। फिर, आज गंगा हाथ बाहर निकाल कर, यह भेंट कैसे स्वीकार करेगी ? आख़िर, पंडित गंगा राम, भक्त रविदास जी से कसीरा लेकर अपने साथियों सहित गंगा-स्नान करने के लिए गंगा नदी की ओर चल पड़ा। गंगा नदी पर पहुंच कर पंडित गंगा राम ने स्नान किया और फिर भक्त रविदास जी द्वारा दी गयी भेंट लेकर गंगा की ओर बढ़ा। पंडित गंगा राम व उसके साथी देखते हैं कि अचानक ही गंगा नदी में से एक हाथ निकला, जिसने भक्त रविदास जी की ओर से भेंट किया गया कसीरा स्वीकार किया और फिर यह हाथ अदृश्य हो गया। सभी लोग इस अद्भुत कौतृक को देख कर बहुत हैरान हुए तथा भक्त रविदास जी की जै-जैकार करने लग पड़े।

भाई गुरदास जी ने दसवीं वार की सत्रहवीं पउड़ी में इस सारे वृत्तांत का यूं व्याख्यान किया है :

भगतु भगतु जगि वजिआ
चहु चकां दे विचि चमिरेटा।
पाण्हा गंढै राह विचि कुला
धरम ढोइ ढोर समेटा।
जिउ करि मैले चीथड़े
हीरा लालु अमोलु पलेटा।
चहुं वरना उपदेसदा
गिआन धिआनु करि भगति सहेटा।
न्हावणि आइआ संगु मिलि
बानारस करि गंगा थेटा।
कढि कसीरा सउपिआ रविदासै गंगा दी भेटा।
लगा पुरबु अभीच दा डिठा
चलितु अचरजु अमेटा।
लइआ कसीरा हथु कढि सूतु
इकु जिउ ताणा पेटा।
भगत जनां हरि मां पिउ बेटा।।१७।।१०।।

श्री गुरु नानक देव जी के संग मिलाप : "गुरमुख खोजन भए उदासी" के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए, श्री गुरु नानक देव जी ने धर्म-प्रचार यात्राएं की। पहली प्रचार-यात्रा के दौरान, श्री गुरु नानक देव जी फरवरी, सन् १५०९ ई. में शिवरात्री से कुछ दिन पूर्व काशी पहुंचे। काशी पहुंच कर, जिस स्थान पर श्री गुरु नानक देव जी ने विश्राम किया, उस स्थान पर सुंदर 'गुरुद्वारा गुरु का बाग' शोभायमान है। यहाँ से श्री गुरु नानक देव जी, भक्त रविदास जी से मिलने के लिए, उनके घर गए तथा वहां सत्संग करके सभी को निहाल किया। तब श्री गुरु नानक देव जी की सांसारिक आयु लगभग ४०

वर्ष की थी और भक्त रविदास जी की सांसारिक आयु लगभग १३२ वर्ष की थी। श्री गुरु नानक देव जी ने काशी में ही भक्त रविदास जी द्वारा उच्चरित बाणी को संभाल लिया था, जिसे बाद में श्री गुरु अरजन देव जी ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में शोभायमान किया था।

अलग-अलग संस्थाओं द्वारा भक्त रविदास जी की रचनाओं के अलग-अलग संग्रह तैयार किए हैं, परन्तु इन रचनाओं की कोई प्रमाणिकता नहीं है, क्योंकि अलग-अलग संग्रहों में भक्त रविदास जी द्वारा रचित रचनाओं की गिनती अलग-अलग है और रचनाओं का स्वरूप भी अलग-अलग है। इन रचनाओं में एकसारता नहीं है, इसलिए ऊपर दिए गए तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि आज के समय में भक्त रविदास जी की श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में शोभायमान बाणी ही उनकी प्रमाणिक बाणी है, क्योंकि इस बाणी को श्री गुरु नानक देव ने स्वयं एकत्र किया था और संभाल लिया था।

प्रचार-यात्राएं : भक्ति-काल के दौरान सभी भक्तों और महापुरुषों ने प्रचार-यात्राएं करके संसार के अलग-अलग क्षेत्रों में जाकर आम लोगों को अकाल पुरख की भजन-बंदगी करने का उपदेश दिया। भक्त रविदास जी भी अपने जीवन-काल के दौरान प्रचार-यात्राएं करके अलग-अलग क्षेत्रों में गए और आम लोगों को कर्म-कांडों व पाखंडों से बाहर निकाल कर, निर्गुण एवं निराकार अकाल पुरख की भजन-बंदगी करने की प्रेरणा की। भक्त रविदास जी ने अपने जीवन-काल के दौरान उत्तर प्रदेश के प्रतापगढ़, शाहजहांपुर, गोरखपुर और झांसी, राजस्थान के चित्तौड़गढ़, उदयपुर, बूंदी, अजमेर, जोधपुर और जैसलमेर, मध्य प्रदेश के बुरहानपुर और भोपाल, महाराष्ट्र के मुम्बई और नागपुर, बिहार के भागलपुर, पंजाब के माधोपुर, जम्मू-कश्मीर के श्रीनगर, हिमाचल प्रदेश के डलहौजी, (वर्तमान समय वाले) पाकिस्तान के कराची, बहावलपुर, कोहाट, दर्रा ख़ैबर के अलावा और भी बहुत-से क्षेत्रों में प्रचार-यात्राएं करके, मानवता को सत्य का राह दरसाया।

रानी झालाबाई : उन दिनों काशी (बनारस) की धरती धार्मिक, आध्यात्मिक व सभ्याचार की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण और पवित्र मानी जाती थी। चित्तौड़गढ़ की रानी झालाबाई, चित्तौड़गढ़ से चलकर काशी पहुंची। कुछ इतिहासकार लिखते हैं कि झालाबाई नाम की कोई रानी नहीं हुई। वास्तव में चित्तौड़गढ़ के राजा राणा सांगा की एक पत्नी, झालावाड़ (राजस्थान) के एक राजपूताने घराने में से थी, जिस कारण इस रानी का नाम झालाबाई पड़ गया था। कुछ इतिहासकारों व विद्वानों ने इस रानी का नाम 'झालीबाई' भी लिखा है।

अस्तु, काशी पहुंच कर रानी झालाबाई ने गंगा-स्नान करके अलग-अलग मन्दिरों के दर्शन किए। इसी दौरान रानी झालाबाई ने भक्त रविदास जी की उपमा सुनी। भक्त रविदास जी की उपमा सुनकर, रानी झालाबाई के हृदय में भक्त रविदास जी के दर्शन करने की इच्छा प्रबल हुई। रानी झालाबाई भक्त रविदास जी के दर्शन करने के लिए, भक्त रविदास जी के पास पहुंच गई। भक्त रविदास जी से सत्संग सुन कर, वह बहुत आनंदित हुई। उसका हृदय शान्त हो गया। यूं समझ लें कि उसके हृदय के कपाट खुल गए। रानी झालाबाई भक्त रविदास

जी से इतना प्रभावित हुई कि उसने भक्त रविदास जी के चरणों में विनती की कि "मुझे गुरु-दीक्षा देकर कृतार्थ करो!" भक्त रविदास जी रानी से कहने लगे कि "आप उच्च कुल के राजपूताने घराने से हैं और हम (तथाकथित) नीची जाति के चमार हैं। यह कैसे हो सकता है कि हम आपको गुरु-दीक्षा दें ?" आप किसी उच्च जाति के ब्राह्मण या पंडित के पास जाकर गुरु-दीक्षा प्राप्त करें और उन्हें अपना गुरु धारण करें!" यह सुन कर रानी झालाबाई कहने लगी कि "मैं बहुत स्थानों पर गई हूं, परन्तु जो दिव्य आनन्द और आत्मिक शांति मुझे आपके साथ सत्संग कर मिली है, वह कहीं और नहीं मिली, इसलिए मैंने यह निश्चय किया है कि मैं आपसे ही गुरु-दीक्षा प्राप्त करूंगी।"

भक्त रविदास जी द्वारा गुरु-दीक्षा देने से बार-बार मना करने पर रानी झालाबाई ने प्यार और सम्मान से बाल-हठ कर लिया और भक्त रविदास जी से विनती करने लगी कि "जब तक आप मुझे गुरु-दीक्षा नहीं दोगे, तब तक मैं अन्न ग्रहण नहीं करूंगी।" आख़िर, रानी झालाबाई का प्यार, सम्मान व श्रद्धा देख कर, भक्त रविदास जी ने रानी झालाबाई को गुरु-दीक्षा दे दी। भक्त रविदास जी से गुरु-दीक्षा लेकर रानी झालाबाई निर्गुण व निराकार पारब्रह्म की भजन-बंदगी में लीन हो गई। जब ब्राह्मणों और पंडितों को इस बात का पता चला कि चित्तौड़गढ़ राजघराने की राजपूत रानी झालाबाई ने तथाकथित नीची जाति के भक्त रविदास जी से गुरु-दीक्षा लेकर, उन्हें अपना गुरु धारण कर लिया है तो वे बहुत तिलमिलाए। उन्हें लगा कि यूं तो उनकी सर्वोच्चता ही ख़त्म हो जाएगी। परन्तु, ये ब्राह्मण कुछ कर न सके।

रानी झालाबाई कुछ दिन काशी में रहकर, अकाल पुरख की भजन-बंदगी करती रही। फिर, भक्त रविदास जी से आज्ञा लेकर वापिस चित्तौड़गढ़ आ गई। रानी झालाबाई ने चित्तौड़गढ़ पहुंच कर, अपने पति राणा सांगा को सारा हाल सुनाया। रानी झालाबाई से भक्त रविदास जी की उपमा सुनकर राणा सांगा के हृदय में भी भक्त रविदास जी के प्रति प्यार, सम्मान व श्रद्धा की भावना प्रकट हो गई। रानी झालाबाई ने राणा सांगा से कहा कि भक्त रविदास जी को सम्मान सहित निमंत्रण-पत्र भेज कर चित्तौड़गढ़ आने के लिए विनती करनी चाहिए ताकि वे चित्तौड़गढ़ आकर, यहां के निवासियों को सत्संग सुनाकर आनंदित करें और अकाल पुरख की भजन-बंदगी की प्रेरणा करें। राजा राणा सांगा ने रानी झालाबाई की सलाह मान कर अपने वजीरों को बुलाया और उन्हें आदेश किया कि काशी जाकर भक्त रविदास जी को चित्तौड़गढ़ आने के लिए, सम्मान सहित विनती की जाए और उन्हें सम्मान व शानो-शौकत के साथ चित्तौड़गढ़ लाने का प्रबंध किया जाए। राजा का आदेश सुनकर वजीरों ने भक्त रविदास जी को काशी से चित्तौड़गढ़ लाने का पूरा प्रबन्ध कर दिया और राजा राणा सांगा के आदेश के अनुसार, ये वज़ीर भक्त रविदास जी को श्रद्धा व सम्मान के साथ चित्तौड़गढ़ ले आए। ऐतिहासिक स्रोतों के अनुसार, भक्त रविदास जी सन् १५१७ ई. में पहली बार चित्तौड़गढ़ आए थे।

भक्त रविदास जी के चित्तौड़गढ़ पहुंचने पर, यहां एक बहुत बड़े व उच्च कोटि के सत्संग का

प्रबन्ध किया गया। इस सत्संग में भाग लेने के लिए आस-पास के प्रसिद्ध व प्रबुद्ध विद्वानों और पंडितों को निमंत्रण-पत्र भेजे गए। चित्तौड़गढ़ और आस-पास के अन्य क्षेत्रों के लोग इस सत्संग में शामिल हुए। सत्संग की समाप्ति के बाद ब्रह्म-भोज का विशेष प्रबन्ध किया गया था। विद्वान ब्राह्मणों और पंडितों को पंक्ति में बैठ कर भोजन खाने के लिए, विनती की गई। ब्राह्मण और पंडित पंक्तियों में बैठ गए, परन्तु जब उन्हें यह पता चला कि भक्त रविदास जी भी इसी पंक्ति में बैठ कर भोजन खाएंगे तो उन्होंने इसका विरोध करना शुरू कर दिया और कहने लगे कि "भक्त रविदास जी (तथाकथित) नीची जाति से सम्बन्धित हैं। भक्त रविदास जी के साथ एक ही पंक्ति में बैठ कर भोजन खाने से तो हमारा धर्म भ्रष्ट हो जाएगा और हम अपवित्र हो जाएंगे, इसलिए हम भक्त रविदास जी के साथ बैठ कर भोजन नहीं खाएंगे!" इन ब्राह्मणों और पंडितों ने आपस में सलाह करके यह फैसला सुना दिया कि "पहले हम पंक्ति में बैठ कर भोजन खाएंगे, उसके बाद ही भक्त रविदास जी व अन्य सत्संगियों को भोजन खिलाया जाए। यदि ऐसा न किया गया तो हम ब्रह्म-भोज नहीं खाएंगे और उठकर चले जाएंगे।"

जब राजा राणा सांगा और रानी झालाबाई को इस बात का पता चला तो वे घबरा गए और सोचने लगे कि "अब क्या किया जाए। यदि भक्त रविदास जी से विनती करते हैं कि आप बाद में भोजन खा लेना तो वे नाराज़ हो जाएंगे। हम अपने गुरु को नाराज़ करके कहां जाएंगे? यदि हम इन ब्राह्मणों और पंडितों की बात नहीं मानते तो ये ब्राह्मण व पंडित ब्रह्म-भोज बीच में ही छोड़ कर चले जाएंगे। यूं सारी रियासत में हमारी बदनामी हो जाएगी।" ऐसे हालत में क्या किया जाए, उन्हें कुछ समझ नहीं आ रहा था।

जब भक्त रविदास जी को इस बात का पता चला कि ब्राह्मण और पंडित उनके साथ बैठ कर भोजन खाने से मना कर रहे हैं तो उन्होंने अपने हृदय की विशालता दर्शाते हुए स्वयं ही कह दिया कि "कोई बात नहीं, पहले इन ब्राह्मणों और पंडितों को भोजन खिला दो, हम बाद में खा लेंगे।" भक्त रविदास जी से आज्ञा लेकर ब्राह्मणों और पंडितों को भोजन खिलाने का प्रबंध किया गया। ब्राह्मण और पंडित पंक्ति में बैठ गए। उनकी थालियों में भोजन परोस दिया गया। जब वे ब्राह्मण और पंडित भोजन खाने लगे तो एक आश्चर्यजनक कौतुक हुआ। उन्हें लगा कि जैसे भक्त रविदास जी भी उनके साथ बैठ कर, उनकी थाली में से भोजन खा रहे हैं। यह दृश्य देख कर उनके होश उड़ गए। वे हैरान हो गए। उनकी हैरानी की कोई सीमा न रही।

अब, उन ब्राह्मणों और पंडितों को यह एहसास हो गया था कि भक्त रविदास जी कोई आम व्यक्ति नहीं हैं अपितु वे तो कोई पहुंचे हुए महापुरुष हैं। उन्हें इस बात का यकीन हो गया था कि भक्त रविदास जी अकाल पुरख के सच्चे भक्त हैं। उन्होंने अज्ञानतावश हुई अपनी भूल के लिए भक्त रविदास जी से माफी मांगी और भक्त रविदास जी के साथ एक ही पंक्ति में बैठ कर भोजन खाया।

भक्त रविदास जी ने उन ब्राह्मणों और पंडितों को समझाया कि निराकार व निर्गुण अकाल पुरख की भक्ति सबसे उत्तम है। उस अकाल पुरख ने

सबको एक जैसा पैदा किया है। ये तथाकथित जातियां और वर्ण आदि तो हमारे समाज ने बनाए हैं। अकाल पुरख के दर पर, भजन-बंदगी व नाम-सुमिरन की महत्ता है न कि तथाकथित ऊंची जातियों की। भक्त रविदास जी से सत्य का उपदेश सुन कर, वे ब्राह्मण और पंडित बहुत आनंदित हुए तथा खुशी-खुशी अपने घर चले गए।

मीरा बाई को गुरु-दीक्षा : चित्तौड़गढ़ के राजा राणा सांगा व रानी झालाबाई की पुत्र-वधू तथा राजा भोज की सुपत्नी मीरा बाई ने भक्त रविदास जी की बहुत उपमा सुनी थी। सन् १५२७ ई. की बात है, मीरा बाई भक्त रविदास जी के दर्शन करने के लिए चित्तौड़गढ़ से काशी पहुंची और भक्त रविदास जी के दर्शन करके बहुत आनंदित हुई।

मीरा बाई ने भक्त रविदास से विनती की कि "मैं आपसे गुरु-दीक्षा लेकर आपको अपना गुरु धारण करना चाहती हूं, कृप्या मुझे गुरु-दीक्षा देकर कृतार्थ करो!" भक्त रविदास जी चाहते थे कि मीरा बाई किसी तथाकथित ऊंची जाति के ब्राह्मण को अपना गुरु धारण करके, उससे गुरु-दीक्षा प्राप्त करे, क्योंकि मीरा बाई राजपूताने की पुत्र-वधू हैं और तथाकथित ऊंची जाति से सम्बन्ध रखती हैं। परन्तु, मीरा बाई के बार-बार विनती करने पर भक्त रविदास जी ने मीरा बाई को गुरु-दीक्षा देकर कृतार्थ किया। भक्त रविदास जी से गुरु-दीक्षा प्राप्त कर मीरा बाई बहुत प्रसन्न हुई और अकाल पुरख की भजन-बंदगी में लीन रहने लगी।

कुछ समय काशी में रुकने के बाद मीरा बाई ने भक्त रविदास जी को चित्तौड़गढ़ चलने के लिए विनती की। भक्त रविदास जी ने मीरा बाई के प्यार, सम्मान व श्रद्धा को देखते हुए चित्तौड़गढ़ जाने के लिए हां कर दी। भक्त रविदास जी व अन्य सत्संगी काशी से चलकर चित्तौड़गढ़ पहुंच गए।

अंतिम समय : भक्त रविदास जी बहुत वृद्ध हो चुके थे। आपका अंतिम समय नजदीक आ गया था। भक्त रविदास जी के अंतिम समय के सम्बन्ध में इतिहासकारों व विद्वानों के अलग-अलग विचार हैं। अधिकांश इतिहासकारों व विद्वानों के अनुसार, भक्त रविदास जी अपने अंतिम समय में चित्तौड़गढ़ से चलकर वापिस काशी आ गए थे और यहीं पर भक्त रविदास जी लगभग १५१ वर्ष की आयु भोग कर, सन् १५२७ ई. (संवत् १५८४) में अकाल चलाणा कर गए। कुछ इतिहासकार निम्नलिखित पंक्तियों के आधार पर यह लिखते हैं कि भक्त रविदास जी अपने अंतिम समय में चित्तौड़गढ़ से वापिस नहीं आए और उन्होंने चित्तौड़गढ़ में ही अपने श्वास त्याग दिए :

पंद्रह सौ चौअस्सी, चीतौरे भई भीर।
जर जर देह कंचन भई,
रवि रवि मिलिओ सरीर।

बाणी भक्त रविदास जी की : श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में भक्त रविदास जी के १६ रागों में उच्चारण किए गए कुल ४० शबद शोभायमान हैं। भक्त रविदास जी ने समूची मानवता को बहुत-सी शिक्षाएं दी, परन्तु इनमें से प्रमुख शिक्षा यह थी कि मूर्ति-पूजा, ऊंच-नीच, जाति-भेद, वर्ण-भेद तथा कर्म-कांडों व पाखंडों का त्याग करके, निर्गुण व निराकार अकाल पुरख की भक्ति करें। वे स्वयं भी निर्गुण व निराकार अकाल पुरख के उपासक थे।

सिक्खों का नामोनिशान मिटाने का नापाक इरादा : बड़ा घल्लूघारा

*-डॉ. मनजीत कौर**

कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी,
सदियों से रहा है दुश्मन दौर-ए-जमाँ हमारा।

अल्लामा इकबाल की उपरोक्त काव्य-पंक्तियां सिक्ख कौम पर सटीक बैठती हैं, क्योंकि इस कौम का समूचा इतिहास कड़े संघर्ष एवं शहादतों से भरा पड़ा है। सिक्खों का नामोनिशान मिटाने वालों के नापाक इरादों पर पूर्णतया पानी फिर गया और उनका खुद का वजूद ही खत्म हो गया। जब-जब सिक्ख कौम पर जुल्म ढाए गए और इसे नेसतो-नाबूद करने के हत्थकंडे अपनाए गए, तब-तब सिक्खों का मनोबल बढ़ता गया। सिक्ख बेघर हुए, जान-माल की बेहद हानि हुई, लेकिन गुरु-नियति से मर्यादा में रहते हुए ये जालिमों का सामना करते हुए सदैव चढ़दी कला में रहे। कवि शुगल ने इस संदर्भ में कितना सटीक लिखा है :

तेरी कुर्बानी दी दुहाई खालसा!
धंन धंन तेरी है कमाई खालसा!

'घल्लूघारा' शब्द का अर्थ है— नरसंहार अथवा सब कुछ बर्बाद करना। 'बड़ा घल्लूघारा' से तात्पर्य है– बहुत बड़ी तादाद में अर्थात् बड़े पैमाने पर लोगों का कत्लेआम करना, बर्बादी करना।

अठारहवीं शताब्दी तो मानों सिक्ख पंथ के लिए काल का रूप धारण किए हुए थी। यह दौर सिक्ख पंथ के लिए अत्यन्त दर्दनाक था, जिसमें सिक्खों ने पल-पल बेशुमार मुसीबतों का हंसते-हंसते मुकाबला किया और शूरवीरता के साथ लड़ते हुए शहादत प्राप्त की। १८वीं सदी में शहीद हुए सिक्खों की गिनती कर पाना ही मुश्किल है। यह वो समय था जब भारत में आपसी फूट के कारण अपने ही अपनों के दुश्मन बने हुए थे। जयचंद और नजीब खान जैसे गद्दारों की यहां कोई कमी नहीं थी।

रोहिलखंड के शासक नजीब खान ने मराठों की शक्ति को तहस-नहस करने के लिए उनके विरुद्ध चढ़ाई करने हेतु अहमद शाह अब्दाली को निमन्त्रण भेजा। सन् १७६१ में पानीपत के

**२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४, फोन : ९१२९७-६२५२३*

मैदान में अब्दाली औऱ मराठों के बीच घमासान युद्ध हुआ। इसमें मराठों की पराजय हुई और उनका सेनापति सदाशिव राव भाउ वीरगति को प्राप्त हुआ। यह अब्दाली का पांचवां आक्रमण था, जो केवल मराठों के विरुद्ध था। इस आक्रमण के पश्चात अब्दाली का यहां रहकर लूटमार करना, आतंक फैलाना मकसद बन गया। उत्तर प्रदेश तक के क्षेत्रों में लूटपाट मचाते हुए उसने २० मार्च, १७६१ ई. को दिल्ली में पड़ाव किया। इस दौरान अब्दाली के खेमे में हजारों बंदी तो थे ही, इनमें २२०० सुंदर विवाहित और अविवाहित हिंदू स्त्रियां भी थीं। अफसोस, इन अबलाओं की करुण व्यथा सुनने वाला कोई नहीं था सिवाय सिक्खों के। हर तरह से निराश-हताश हिंदू धर्म के धार्मिक-सामाजिक नेता श्री अमृतसर साहिब अप्रैल, १७६१ ई. में खालसे की शरण में आए, ठीक वैसे ही जैसे श्री अनंदपुर साहिब में कश्मीरी पण्डित औरंगजेब के जुल्मों से निज़ात पाने हेतु श्री गुरु तेग बहादर साहिब की शरण में आए थे। जब अब्दाली के सताए लोगों के मुखिया ने श्री अमृतसर साहिब पहुँच कर खालसे की शरण ली, इस दौरान सरदार जस्सा सिंघ आहलूवालिया दल खालसा के सरदार थे।

बेशक उस समय अब्दाली की सेना के साथ सीधे टक्कर नहीं ली जा सकती थी, फिर भी आगन्तुकों की घोर मुसीबतों को समझते हुए उनकी सहायता हेतु कुछ सिंघ सरदारों को साथ लेकर सरदार जस्सा सिंघ आहलूवालिया ब्यास नदी के किनारे पहुँचे और ब्यास नदी पार कर रही अब्दाली सेना पर हमला कर दिया। बड़े साहस के साथ युवतियों (हिंदू स्त्रियों) को छुड़वा कर जत्थेदार द्वारा सम्मान सहित उनके घर पहुंचाया गया। यहां एक बात विशेष उल्लेखनीय है कि जिन युवतियों को अपवित्रता की दुहाई देकर उनके परिवार वालों ने स्वीकार नहीं किया, वे सहर्ष अमृत-पान कर, सिक्ख भाइयों की सेवा हेतु सिक्ख धर्म में ही सम्मिलित हो गईं।

इस घटना से अब्दाली तिलमिला उठा। उस समय तो वह काबुल लौट गया, लेकिन अपने गुप्तचर पंजाब छोड़ गया और मन ही मन यह ठान बैठा कि सिक्खों से इस अपमान का बदला लेकर रहूंगा। यकीनन उसने हिंदोस्तान पर छठा आक्रमण कर, हजारों सिक्खों को शहीद कर यह बदला लिया।

अब्दाली का छठा आक्रमण हिंदोस्तान पर होने वाला है, इसकी खबर सिक्खों को मिल

चुकी थी, क्योंकि यह हमला केवल सिक्खों से बदला लेने के कारण सिक्खों के ही विरुद्ध था। सिक्खों ने अपने परिवारों को सतलुज दरिया के पार क्षेत्र में ले जाने का निर्णय लिया, लेकिन अब्दाली की सेना तेजी से, अनुमानित समय से पूर्व ही पहुँच गई और ५ फरवरी, १७६२ ई. के दिन सतलुज के तट पर स्थित कुप्प रुहीड़ा (जिला संगरूर) नामक स्थान पर सिक्खों पर प्रात: ४-५ बजे के करीब अचानक टूट पड़ी। बेशक सिक्खों ने डटकर मुकाबला किया, लेकिन पहले ही दिन सिक्खों का भारी नुकसान हुआ। मलेरकोटला की दिशा में सिक्ख सरदार चढ़त सिंघ की अगुआई में बड़ी बहादुरी के साथ लड़ रहे थे। 'बोले सो निहाल, सति श्री अकाल' के जैकारों की गगनभेदी आवाज सिक्खों की जिंदादिली बयान कर रही थी। कम संख्या में होते हुए भी चढ़दी कला में लड़ते हुए सिक्ख और बड़ी तादाद में अब्दाली सेना, लगभग दो मील तक घमासान युद्ध चलता रहा। दोनों तरफ से मारकाट हुई, भारी जानी नुकसान हुआ। लाशों के ढेर और लहू की मानों नदियां बह चली थीं।

अब सिक्खों को चारों ओर से घेर लिया गया था। अब सामना करते हुए शहीद होने के अतिरिक्त कोई रास्ता नहीं था। इस दौरान सिक्खों के बच्चे और सिंघनियों ने भी मोर्चा सम्भाला और बड़ी दिलावरी के साथ लड़ते हुए शत्रुओं के हौसले पस्त किए। कुछ सिक्ख घायलों की सेवा में तैनात रहे तो कुछ युद्ध में मारे गए शत्रु सैनिकों के शस्त्र-इकट्ठा कर खालसाई फौज को देते गए, ताकि युद्ध जारी रखा जा सके। असल में सिक्खों के पास गोला-बारूद और शस्त्र आदि कम मात्रा में थे और जो था वो लगभग खत्म हो चुका था।

बहुत कम संख्या में होने के बावजूद भी सिक्खों की युद्ध-नीति एवं जिंदादिली बाकमाल थी, जिसने अब्दाली की सेना को आश्चर्यचकित कर दिया था। बेशक वो सिक्खों की बहादुरी के चर्चे सुन चुका था, लेकिन आज स्वयं यह दृश्य देखकर आग बबूला हो गया और उसने चारों ओर से भारी सेना के साथ सिक्खों पर आक्रमण कर दिया। इस बार सिक्ख हजारों की संख्या में शहीद हो गए। सिक्ख योद्धाओं द्वारा सिक्ख बच्चों, बुजुर्गों के गिर्द बनाया गया सुरक्षा-घेरा भी टूट गया और परिणामस्वरूप अत्यधिक जानी नुकसान हुआ। ऐतिहासिक तथ्यों के अनुसार इस युद्ध में लगभग तीस हजार सिंघ, सिंघनियां और बच्चे

शहीद हो गए। उस समय की कुल गिनती के अनुसार लगभग सिक्ख कौम आधी शहीद हो गई थी।

अब्दाली अभी भी बौखलाया हुआ था क्योंकि वह सिक्खों की हस्ती मिटाने की ठान चुका था। उसके नापाक इरादे अभी पूरे नहीं हुए थे, इसलिए वो जाते-जाते श्री हरिमंदर साहिब को पूरी तरह से ध्वस्त कर गया। यही नहीं, वह कई शहीद सिक्खों को गाड़ियों में भर कर लाहौर ले गया। इस जालिम ने अपनी शक्ति का प्रदर्शन करने हेतु उन्हें लाहौर के मुख्य दरवाजों पर टंगवा दिया।

इस घल्लूघारे के नौ महीने बाद सिक्ख फिर अपने ठिकानों पर आ गए। धीरे-धीरे खालसे की शक्ति बढ़ने लगी। सिक्खों ने अब्दाली द्वारा ध्वस्त किए गए श्री हरिमंदर साहिब का पुनर्निर्माण करवाया।

कैसी भी भयावह परिस्थितियां रही हों, सिक्खों ने अकाल पुरख का आसरा लेते हुए तथा गुरबाणी आशयानुसार जीवन बसर करते हुए निरन्तर चढ़दी कला में रहना सीखा। इस खूनी साके (बड़ा घल्लूघारा) में इतना भारी नुकसान होने के बाद भी शूरवीर सिक्ख न झुके, न रुके। वो समय भी आया जब सिक्खों ने खालसा राज की स्थापना कर ली और दिखा दिया दुनिया वालों को कि कोई भी ताकत अथवा सत्ता सिक्खों का नामोनिशान नहीं मिटा सकती। उनके हौसले पर्वत सदृश्य अडिग हैं। उनकी यह शक्ति है 'अमृत' की, जो गुरु दशमेश पिता जी ने उन्हें प्रदान की है। प्रो. सुरिंदर कौर ने इस तथ्य को अपने एक आलेख में इस प्रकार उद्धृत किया है :

सिंघां कदे झुकणा नहीं !
सिंघां कदे मुक्कणा नहीं!
सिंघां नूं झुकाउण वाला,
सिंघां नूं मुकाउण वाला,
खिआल इक जुनून है!
कोई जुल्म, कोई सितम,
सानूं झुका सकदा नहीं!
सानूं मिटा सकदा नहीं!
क्योंकि हाले तां साडीआं रगां विच,
कलगीधर दा खून है!

महान योद्धा सरदार शाम सिंघ अटारी

-डॉ. राजेंद्र सिंघ साहिल*

फरवरी, १८४६ ई. में सभरावां (सभराउं) में अंग्रेजों के विरुद्ध लड़ी गई जंग सिक्ख इतिहास की एक अत्यंत महत्वपूर्ण जंग है। यह वो जंग थी, जिसमें अपने ही पक्ष के डोगरा सरदारों की गद्दारी के चलते ख़ालसा फौज जीतते-जीतते हार गई और सिक्ख साम्राज्य का पतन प्रारंभ हो गया। निरंतर पतन के कारण अंततः २९ मार्च, १८४९ ई. को सिक्ख साम्राज्य को अंग्रेजी हुकूमत में मिला लिया गया। सभरावां की जंग सरदार शाम सिंघ अटारी के नेतृत्व में लड़ी गई थी और इसी युद्ध में वे १२ फरवरी, १८४६ ई. को शहीद हुए।

शेर-ए-पंजाब महाराजा रणजीत सिंघ का सिक्ख राज जिन बहादुर, वफादार एवं दूरंदेश सिपहसालारों की राज-भक्ति पर टिका था, उनमें सरदार शाम सिंघ अटारी का नाम बहुत महत्वपूर्ण है।

जन्म एवं वंश : सरदार शाम सिंघ अटारी का जन्म सन् १७८५ में हुआ। आपके पिता का नाम सरदार निहाल सिंघ और माता का नाम माता शमशेर कौर था। आपके पूर्वज राजस्थान में जैसलमेर के रहने वाले थे। जैसलमेर से आकर आपका खानदान पहले 'फूल महिराज' के गाँवों में आबाद हुआ। फिर आपके पूर्वज सन् १७३५ में जगराओं के निकट 'काऊंके' गाँव में आ बसे। इसके बाद आपका परिवार श्री अमृतसर साहिब जिले में आ गया। यहाँ उदासी संत मूलदास से एक नये गाँव की नींव रखवाई। आपके पूर्वजों ने इस नये स्थापित हुए गाँव में एक ऊँचे स्थान पर तीन-मंजिला भवन का निर्माण कराया। इस बड़े भवन को लोग 'अटारी' कहने लगे। बाद में गाँव का नाम ही 'अटारी' प्रसिद्ध हो गया। सरदार शाम सिंघ का जन्म यहीं पर हुआ ।

महाराजा रणजीत सिंघ के सिपहसालार के रूप में : सरदार शाम सिंघ अटारी के पिता सरदार निहाल सिंघ महाराजा की सेना के प्रमुख जरनैलों में से थे। सरदार शाम सिंघ पिता की ही भाँति कुशल घुड़सवार, उत्कृष्ट तीरंदाज, तेग के धनी, ईमानदार, परोपकारी एवं बहादुर योद्धा थे। सन् १८०३ में मात्र १८ वर्ष की आयु में आप महाराजा की फौज में शामिल हो गये।

*१/३३८, स्वप्नलोक, दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा, लुधियाना, फोन : ६२३९६-०१६४१

जनवरी, सन् १८१८ में सरदार निहाल सिंघ के निधन के बाद महाराजा ने आपको अटारी जागीर का सरदार नियुक्त कर दिया। सरदार शाम सिंघ ने सन् १८१८ में मुलतान के युद्ध में और सन् १८१९ में कश्मीर के युद्ध में विशेष बहादुरी दिखाई। इससे प्रसन्न होकर महाराजा ने आपको हीरों से जड़ी एक कलगी भी भेंट की थी। सन् १८३१ में रोपड़ में महाराजा और अंग्रेज वायसराय लार्ड विलियम वैंटिक की मुलाकात के समय आप महाराजा के साथ थे।

सन् १८३४ में सूबा सरहिंद के पठानों ने महाराजा के ख़िलाफ़ बग़ावत कर दी। इस बग़ावत को दबाने के लिए सरदार शाम सिंघ अटारी को भेजा गया। लड़े गये युद्धों में सरदार शाम सिंघ ने विशेष भूमिका निभाई।

महाराजा रणजीत सिंघ के साथ रिश्तेदारी कायम : सरदार शाम सिंघ के पिता सरदार निहाल सिंघ महाराजा के बहुत करीबी मित्र थे। यह मित्रता सन् १८३७ में रिश्तेदारी में बदल गई, जब सरदार शाम सिंघ की बेटी नानकी का विवाह महाराजा के पौत्र कुंवर नौनिहाल सिंघ के साथ हो गया।

महाराजा के देहांत के बाद : सन् १८३९ में महाराजा के देहांत के बाद सरदार शाम सिंघ कुछ समय पेशावर में रहने के बाद अटारी लौट आये। सन् १८४० में हज़ारा में पैंदा खान ने बग़ावत कर दी। इस बग़ावत को रोकने के लिए एक बार फिर सरदार शाम सिंघ अटारी को चुना गया। सरदार शाम सिंघ अटारी ने बग़ावत को कुचल डाला।

आप सिक्ख राज के प्रति डोगरा सरदारों की गद्दारी के कारण बहुत दुखी थे। मुद्दकी, फेरूमान, बद्धोवाल और आलीवाल के अंग्रेज-सिक्ख युद्धों में हार के बाद महारानी जिंदां ने आपको विशेष रूप से सिक्ख फौज की कमान संभालने के लिए बुलाया।

सभरावां के युद्ध में शहादत : सरदार शाम सिंघ के नेतृत्व में सिक्ख सेनाएँ फरवरी, १८४६ ई. में सभरावां में लड़ीं। विजय मिल ही चुकी थी कि गद्दार तेजा सिंघ और लाल सिंघ ने सतलुज पार लड़ रही सिक्ख फौज को असला भेजना बंद कर दिया और सतलुज नदी पर बना नावों का पुल तोड़ दिया। नदी पार लड़ते हुए सरदार शाम सिंघ अटारी १० फरवरी, १८४६ ई. को शहीद हो गये। सरदार साहिब के शहीदी-स्थान पर अब सुंदर गुरुद्वारा साहिब सुशोभित है।

नानक तिना बसंतु है . . .

– डॉ. शमशेर सिंघ *

गुरबाणी में दिन, वार, थित, ऋतुओं, महीनों के वर्णन के माध्यम से मानव को आत्मिक ज्ञान प्रदान किया गया है। इस प्रकार कुदरत का वर्णन किसी प्रकार की सगुण पूजा नहीं है, बल्कि कुदरत में कादिर (प्रभु) का जलवा देख कर मानव की आंतरिक विस्मयकारी अवस्था का निरूपण किया गया है। कुदरत का आनंद मन को प्रेरणा देने वाला बताया गया है। यहाँ हमने केवल बसंत ऋतु का वर्णन करना है। गुरबाणी में बसंत ऋतु मानव के आत्मिक आनंद के साथ सम्बन्धित है।

मानव जीवन का उद्देश्य आत्मिक आनंद प्राप्त करना है। इस ऋतु से तात्पर्य मानव जीवन- आदर्श की प्राप्ति है। कलियुग का समय नाम जपने का है, अन्य किसी प्रकार के कर्मों अर्थात् तप, तीर्थ-रटन आदि कर्मों के कमाने का नहीं है। जिस प्रकार बसंत का समय आने पर कुदरत में हरियाली, सुगंध और बहार आती है, परंतु कुछ पौधे फिर भी सूखे ही रहते हैं, इसी प्रकार नाम जपने वाला मानव सदा बसंत की तरह खिला रहता है और नाम-विहीन मनुष्य का हृदय सदा मुरझाया रहता है। साधसंगत में गुरु का उपदेश कमाने वाला साधक तो हमेशा ही आत्मिक आनंद में रहता है। बसंत ऋतु तो वर्ष में लगभग दो महीने ही रहती है जबकि नाम-अभ्यासी का जीवन सभी ऋतुओं में खिला रहता है। उसके आत्मिक आनंद का भेद प्रभु का असली आत्मिक चिंतन होता है। प्रभु सदा बसंतमयी अर्थात् सदा खिला रहता है। गुरबाणी का मनोरथ मुरझाए हुए फूलों (मनमुखों) को फिर से खिलाना है और उनमें प्यार की सुगंध पैदा करना है :

माहा रुती महि सद बसंतु ।।
जितु हरिआ सभु जीअ जंतु ।।

(श्री गुरु ग्रंथ साहिब, पन्ना ११७२)

बसंत ऋतु कुदरत में हर तरफ़ खुशहाली लेकर आती है। यह खुशहाली उस मानव के लिए एक प्रेरणा है जो अहं के कारण प्रभु से दूर होकर आत्मिक शुष्कता का रोगी होने के कारण आत्मिक पक्ष से मुरझा कर निराश हो गया है। गुरु-प्यारों की संगत कर वह पुनः हरा-भरा हो सकता है। गुरबाणी का यही मंतव्य है कि मानव का यह मन खिल उठे। गुरबाणी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से मानव की आत्मिक जागृति से सम्बन्धित है। गुरबाणी में बसंत ऋतु को मुबारक कहा गया है, क्योंकि इसके द्वारा मानव को एक

*सेवानिवृत्त प्रोफेसर, गुरु ग्रंथ साहिब अध्ययन विभाग, पंजाबी यूनिवर्सिटी, पटियाला—१४७००२, फोन : ९८८८४-३८१५७

ऐसी आंतरिक प्रेरणा मिलती है कि वह प्रभु-नाम में लगन बनाए रखने के लिए उतावला होता है। ऐसी लगन पैदा करना गुरबाणी का मनोरथ है। मानव आध्यात्मिक पथ पर चलने से ही अंदर से खिल (आनंदित) हो सकता है :

बनसपति मउली चड़िआ बसंतु ।।
इहु मनु मउलिआ सतिगुरू संगि ।।

(श्री गुरु ग्रंथ साहिब पन्ना, ११७६)

कुदरत, धर्म-ग्रंथ और धार्मिक महापुरुष सभी आत्मिक आनंद प्रदान करने वाले स्रोत होते हैं। कुदरत और धर्म-ग्रंथों का उपदेश समदर्शी होता है। इनका उपदेश सब जीवों को बराबर आनंद प्रदान करता है :

मउली धरती मउलिआ अकासु ।।
घटि घटि मउलिआ आतम प्रगासु ।।...
दुतीआ मउले चारि बेद ।।
सिंम्रिति मउली सिउ कतेब ।।
संकरु मउलिओ जोग धिआन ।।
कबीर को सुआमी सभ समान ।।

(श्री गुरु ग्रंथ साहिब, पन्ना ११९३)

गुरमुखों की संगत मानव के अंदर नाम की लगन पैदा करती है। नाम-सुमिरन के द्वारा ही हृदय में आनंद और व्यावहारिक जीवन में प्रफुल्लता आती है। प्रभु-ज्योति का अंत:करण में अनुभव करने से ही मानवीय जीवन में बसंत (आनंद) आ सकता है। संसार के जीव तृष्णा की अग्नि में जल कर राख हो रहे हैं। उनके मन में व्याप्त माया के भ्रम और दुविधाओं ने जीवन को रूखा और शुष्क कर रखा है। इस ऋतु अर्थात् इस मानवीय जीवन का समय नाम जप कर हरे-भरे होने का अर्थात् आनंद प्राप्त करने का है। गुरबाणी का उपदेश आत्म- मार्ग है जो बाहर की भटकन का त्याग करने के लिए बराबर प्रेरणा देता है। मन में से जब विचारों का अंत हो जाता है तो चेतना नाम- सुमिरन में टिक जाती है। फिर बसंत की ऋतु में शाश्वत आनंद, जो अमृत-फल की भांति होता है, की प्राप्ति होती है। यह आनंद सदा बहार, शाश्वत आनंद की भांति होता है। मानव अपनी कमज़ोरियों से मुक्त होकर दैवीय गुणों का मालिक बन जाता है। गुरु साहिबान वाहिगुरु को अंतरात्मा में अनुभव कर अपनी पवित्र रचना द्वारा आत्मिक पक्ष से सूखे (निराश) हुए सांसारिक लोगों को हरा-भरा करने के लिए उपदेश दृढ़ करा रहे हैं :

हरि का नामु धिआइ कै होहु हरिआ भाई ।।
करमि लिखंतै पाईऐ इह रुति सुहाई ।।
वणु त्रिणु त्रिभवणु मउलिआ
अंम्रित फलु पाई ।।
मिलि साधू सुखु ऊपजै लथी सभ छाई ।।
नानकु सिमरै एकु नामु फिरि बहुड़ि न धाई ।।

(श्री गुरु ग्रंथ साहिब, पन्ना ११९३)

कुदरत का आनंद प्रभु के आनंद के कारण है। प्रभु तो सदा खिला रहता है। बसंत ऋतु का आनंद हमारे लिए कभी विरह का कारण नहीं बनता :

मिलिऐ मिलिआ ना मिलै

मिलै मिलिआ जे होइ ।।
अंतर आतमै जो मिलै मिलिआ कहीऐ सोइ ।।
(श्री गुरु ग्रंथ साहिब, पन्ना ७९१)

प्रभु तो बसंत ॠतु के आने से पहले का है अर्थात् शाश्वत है। वह पहले ही खिला हुआ है। उसके खिलने से सारी सृष्टि खिलती है। प्रभु के खिलने का कारण कोई अन्य शक्ति नहीं है, वह अपने आप से खिलता है और सारी कुदरत में उल्लास का कारण है। गुरु साहिब उपदेश करते हैं कि उस प्रभु के गुणों की विचार अंतरात्मा में करो जो हमेशा खिला रहता है। उस प्रभु को सुमिरन करना चाहिए जो सबका सहारा है, सारा जगत उसके सहारे प्रसन्न है। गुरु साहिब ने बसंत ॠतु का आत्मीकरण किया है। जिन जीव-स्त्रियों को प्रभु-पति की याद आनी चाहिए, हम उस प्रभु को रस्मी तौर पर पाठ-पठन के माध्यम से याद करते हैं। प्रभु के साथ मिलन शारीरिक नहीं आत्मिक होता है। गुरबाणी की आध्यात्मिक रचना का मंतव्य अंतरात्मा के मिलन से है। यही मिलन आत्मिक प्रसन्नता का साधन है। इस साधन के माध्यम से ही अंतरात्मा में प्रभु का घर अनुभव हो सकता है :

— पहिल बसंतै आगमनि
पहिला मउलिओ सोइ ।।
जितु मउलिऐ सभ मउलीऐ
तिसहि न मउलिहु कोइ ।।
(श्री गुरु ग्रंथ साहिब, पन्ना ७९१)

— नानक तिना बसंतु है
जिन्ह घरि वसिआ कंतु ।।
जिन के कंत दिसापुरी
से अहिनिसि फिरहि जलंत ।।
(श्री गुरु ग्रंथ साहिब, पन्ना ७९१)

गुरबाणी मानव को बाहरी सुख और बाहरी मिलाप से ऊपर उठा कर अंतरात्मा के मिलन के लिए प्रेरणा-स्रोत प्रदान करती है। इसके अनुभवी वचनों ने बहुत-से लोगों को बाहरमुखता से अंतरमुखता की तरफ प्रेरणा की गई है। अंतरात्मा का मिलाप जिनके हृदय रूपी घर में बसता है, उनके लिए सदा बसंत है, उनके हृदय में हमेशा आनंद रहता है। जिनके पति घर पर नहीं हैं, परदेस गए हुए हैं अर्थात् जिनके हृदय में प्रभु नहीं बसा, भूला हुआ है, उनके लिए हमेशा पतझड़ है, निराशा है।

गुरबाणी ने कुदरत में कादिर का जलवा देखने और इसे प्यार करने का उपदेश दिया है। कुदरत के आनंद के माध्यम से मानव की मानसिक अवस्था में जो विकास की भावना है, उसका प्रकटीकरण किया है। यह प्रकटीकरण अलग- अलग ॠतुओं के वर्णन के साथ-साथ आत्मिक आनंद, संतुष्टि और प्रेरणा का स्रोत है। कुदरत को देखने और मानने के पश्चात् मन की स्थिरता एक महत्वपूर्ण प्राप्ति होती है, जो गुरबाणी प्रस्तुत करती है।

गुरुद्वारा श्री ननकाणा साहिब के साके का ऐतिहासिक वृत्तांत

*-डॉ. कशमीर सिंघ 'नूर'**

जैसे सन् १७४० ई. में एक मुसलमान फौजदार मस्सा रंघड़ ने सिक्खों के परम केंद्रीय धर्म-स्थान श्री हरिमंदर साहिब, श्री अमृतसर साहिब का, वहां पर हुक्का पीकर, शराब के दौर चलाकर और वेश्याओं का नृत्य करवाकर घोर अपमान किया था, वैसे ही बीसवीं शती के दूसरे दशक के दौरान अंग्रेज़ों के पिट्ठू महंत नारायण दास उर्फ नरैणू ने अपने कुकृत्यों द्वारा श्री गुरु नानक देव जी के प्रकाश-स्थान गुरुद्वारा श्री ननकाणा साहिब को अपवित्र किया था, गुरु-घर की मर्यादा का निरादर व उल्लंघन किया था।

गुरुद्वारा श्री ननकाणा साहिब को स्वतंत्र करवाते समय घटित बड़े दुखांत व हौलनाक साके को 'साका श्री ननकाणा साहिब' नाम से याद किया जाता है।

गुरुद्वारा श्री ननकाणा साहिब की केवल धार्मिक व आस्था भरी महत्ता ही नहीं, बल्कि ऐतिहासिक महत्ता भी बहुत है। श्री गुरु नानक देव जी के सिक्ख सेवक किस तरह सहन कर सकते थे कि कोई अधर्मी-कुकर्मी उनके रहबर के प्रकाश-स्थान पर सुशोभित गुरुद्वारा साहिब की मर्यादा का, वहां पर शीश निवाने आती सिक्ख संगत का, बहू-बेटियों की इज्जत का अपमान कर सके? अतएव उसकी अंधेरगर्दी का विरोध होना ही था।

दिवंगत सिक्ख विद्वान और लेखक ज्ञानी भजन सिंघ लिखते हैं— ''महंत नारायण दास ने कुकर्मों की हद पार कर दी। उसने एक वेश्या को सरेआम अपने घर में रख लिया। गुरुद्वारा साहिब में आने वाली कई औरतों की शीलता भंग की। वो गुरुद्वारा साहिब में वेश्याओं का नृत्य भी करवाने लगा। सिक्खों के हृदय को गहरा आघात पहुंचा और उनमें महंत के विरुद्ध आक्रोश फैल गया। इस संबंध में कई, बैठकें हुई जिनमें महंत से गुरुद्वारा साहिब स्वतंत्र करवाने के लिए सहमति प्रकट की गई। जिला गुरदासपुर का गांव धारोवाली उन दिनों सिक्खों की गतिविधियों का एक केंद्र था। इसी गांव के सरदार लछमण सिंघ गुरुद्वारा प्रबंध सुधार लहर में संघर्ष कर रहे सिक्खों में से एक थे।''

यहां पर यह वर्णन करना आवश्यक है कि बीसवीं शती के आरंभ तक पंजाब के सभी

**बी-एक्स-१२५, संतोखपुरा, हुशियारपुर रोड, जलंधर-१४४००४, फोन : ९८७२२-५४९९०*

बड़े-बड़े ऐतिहासिक गुरुद्वारों पर महंत काबिज़ थे। मुगलों की हकूमत के वक्त आम सिक्ख सियासी गतिविधियों के कारण गुरुद्वारा साहिबान की सेवा-संभाल नहीं कर सकते थे। महाराजा रणजीत सिंघ के शासन-काल में गुरु-घरों के नाम पर ज़मीन तथा अन्य जायदाद लग चुकी थी। ये भौतिक साधन तो गुरु-घर की उचित आय हेतु लगाए गए थे, लेकिन अंग्रेज़ों के शासन-काल में महंत इन सम्पत्तियों के लालचवश होकर, गुरु-मर्यादा त्याग कर ऐशपरस्ती तथा कई तरह के गलत काम करने लगे थे। स्वाभाविक था कि इनके विरुद्ध सिक्खों में आक्रोश पैदा हो गया। अंग्रेज़ सरकार महंतों की मदद करने लगी। वह नहीं चाहती थी कि गुरुद्वारा साहिबान की सेवा-संभाल एवं प्रबंधन का काम सिक्ख समुदाय के सुपुर्द हो जाए। सरकार को सिक्खों के सियासी प्रभाव तथा उनकी एकता की शक्ति बढ़ जाने का डर था। फिरंगी सरकार के साथ टक्कर लेते हुए गुरुद्वारा साहिबान को महंतों से मुक्त करवाने हेतु 'गुरुद्वारा प्रबंध सुधार लहर' की शुरूआत हुई। इस लहर को बाद में 'अकाली लहर' भी कहा जाने लगा। यह लहर सन् १९२१ से लेकर सन् १९२५ तक चलती रही। सिक्खों ने यह लहर 'शिरोमणि अकाली दल' नामक संगठन बनाकर, इसकी आगवानी में चलाई गई थी।

गुरुद्वारा श्री ननकाणा साहिब को महंत नरैणू और उसके गुंडे साथियों से स्वतंत्र करवाने के संबंध में अक्तूबर, १९२० ई. में गांव धारोवाली में बड़ी भारी सभा आयोजित की गई। इस अवसर पर सिक्ख प्रतिनिधियों द्वारा दिए गए भाषणों ने महंत के विरुद्ध संगत में आक्रोश का तूफान पैदा कर दिया। सिक्ख संगत ने अपेक्षित कार्रवाई हेतु योजनाबंदी करनी आरंभ कर दी।

१७ फरवरी, १९२१ ई. को सिंघ सभा लायलपुर (पाकिस्तान) में सुधारक अकालियों की एकत्रता हुई और निर्णय हुआ कि गुरुद्वारा श्री ननकाणा साहिब में फिलहाल कोई अकाली जत्था न जाए। यहीं पर अकाली प्रतिनिधियों को पता चला कि सरदार लछमण सिंघ धारोवाली अपना जत्था लेकर गुरुद्वारा श्री ननकाणा साहिब को जा रहे हैं। सरदार करतार सिंघ झब्बर का जत्था भी उधर चल पड़ा था। इन दोनों जत्थों को रोकने के लिए आदमी भेजे गए।

सरदार करतार सिंघ झब्बर तथा उनके साथियों को चंद्रकोट की झाल पर रोक लिया गया। सरदार लछमण सिंघ ने कहा कि वे अरदास कर चले थे, अतः अब रुकने का सवाल ही पैदा नहीं होता।

इस जत्थे में लगभग दो सौ सिंघ शामिल थे। यह जत्था २१ फरवरी, १९२१ को प्रातः

काल गुरुद्वारा श्री ननकाणा साहिब में पहुंच गया और सभी सिंघ श्री गुरु ग्रंथ साहिब को नत्मस्तक होकर बैठ गए।

महंत नरैणू ने गुंडों को सिंघों पर आक्रमण करने का आदेश दे दिया। सिंघों पर गोलियों की बौछार शुरू हो गई। यूं लग रहा था, जैसे महंत नरैणू ने जनरल डायर का रूप धारण कर लिया हो। कई सिंघ शहीद हो गए। जो घायलावस्था में पड़े तड़प रहे थे, उन्हें टकुए द्वारा निदर्यतापूर्वक कत्ल कर दिया गया। जत्थे के प्रमुख सरदार लछमण सिंघ धारोवाली को कई गोलियां लगीं। फिर उन्हें जंड के पेड़ के साथ बांधकर आग लगा दी गई। जैसे इतिहास की पुनरावृत्ति हुई हो। यह जब्रो-जुल्म की इंतहा थी। गुरु-घर के सिक्ख और श्रद्धालु सदैव अपने गुरुओं से तथा उनके जांबाज़ सेवकों व शहीदों से प्रेरणा, धैर्य एवं हौसला हासिल करते रहे हैं और करते रहेंगे।

जत्थेदार सरदार लछमण सिंघ धारोवाली को शहीद करने के बाद महंत नरैणू ने बाकी शहीद किए गए लगभग डेढ़ सौ शहीद सिंघों के शवों को एकत्र करवाया और ऊपर मिट्टी का तेल डालकर जला दिया। कहा जाता है कि दो वर्षीय एक मासूम व अबोध सिक्ख बच्चे को भी जलती आग में फेंककर शहीद कर दिया गया। वह भुजंगी जरग (लुधियाना) के निवासी शहीद केहर सिंघ का बेटा था तथा अपने पिता के साथ इस शहीदी जत्थे में शामिल हुआ था। यह अत्याचार की चर्म सीमा नहीं, तो क्या था! इससे यह सिद्ध हो गया कि अत्याचारियों का स्वभाव बहुत कठोर एवं क्रूरता भरा होता है।

ऐतिहासिक गवाही के अनुसार गुरुद्वारा श्री ननकाणा साहिब के साके में डेढ़ सौ से अधिक सिंघ शहादत प्राप्त कर गए थे। इस संबंध में दो नामों का जिक्र इतिहास में से किया जाता है। एक नाम सरदार लछमण सिंघ धारोवाली का है और दूसरा नाम भाई दलीप सिंघ साहोवाल का है। भाई दलीप सिंघ साहोवाल खालसा स्कूल सांगला के प्रबंधक थे। जब गांव धारोवाली में सिक्खों का धार्मिक दीवान सजा था, तब खालसा स्कूल सांगला के मुख्याध्यापक ने विद्यार्थियों को हिदायत की थी कि कोई भी उस दीवान में न जाए, लेकिन स्कूल के प्रबंधक भाई दलीप सिंघ ने अपनी उपस्थिति दर्ज करवाई थी। वहां पर हुए प्रचार का उन पर ऐसा असर हुआ था कि वे गुरुद्वारा प्रबंध सुधार लहर के साथ जुड़ गए थे।

गुरुद्वारा बाबे दी बेर तथा कुछ अन्य गुरुद्वारा साहिबान कुकर्मियों से आज़ाद करवाने में भाई दलीप सिंघ ने बाकी सिंघों के साथ मिलकर महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने अपने आप को गुरु-घर का सच्चा सेवक होने का प्रमाण दिया।

जब सिक्ख संगत ने यह निर्णय लिया था कि अभी कोई जत्था गुरुद्वारा श्री ननकाणा साहिब नहीं जाएगा, तब यह पंथक संदेश पहुंचाने का काम भाई दलीप सिंघ को सौंपा गया। वे उस समय अकाली जत्था शेखूपुर के जत्थेदार थे। उनके द्वारा संदेश देते समय उन्हें अन्य सिक्ख तो मिले, परंतु सरदार लछमण सिंघ धारोवाली का जत्था उन्हें न मिला। फिर उन्होंने गुरुद्वारा श्री ननकाणा साहिब को जाने वाले रास्तों पर आदमी भेजे ताकि सरदार लछमण सिंघ धारोवाली के जत्थे को रोका जा सके। एक संदेश-पत्र सरदार लछमण सिंघ को भाई वरिआम सिंघ ने जाकर सौंपा, लेकिन वे अपनी की गई अरदास का हवाला देकर आगे बढ़ते गए और गुरुद्वारा साहिब में दाखिल हो गए। भाई वरिआम सिंघ तुरंत जत्थेदार दलीप सिंघ के पास पहुंचे और उन्हें संपूर्ण घटनाक्रम से अवगत करवाया।

सरदार दलीप सिंघ तुरंत गुरुद्वारा साहिब की ओर भागे, परंतु उनके पहुंचने से पहले ही महंत नरैणू अपने अति घिनौने एवं निंदनीय कार्य को अंजाम दे चुका था। इसके बाद महंत ने स्वयं पिस्तौल से गोलियां दागकर भाई दलीप सिंघ तथा भाई वरिआम सिंघ को भी शहीद कर दिया। इनके मृतक शरीरों को ईटों के अलाव में फेंककर जला दिया गया। महंत नरैणू ने अपने अत्याचार की अति कर दी।

गुरुद्वारा श्री ननकाणा साहिब में घटित इस महात्रासदी के बाद सिक्खों में गुस्से की प्रचंड भावना व लहर फैल गई, क्रोध की ज्वाला भड़क उठी। बड़ी संख्या में सिक्ख गुरुद्वारा परिसर में इकट्ठा होना शुरू हो गए। फिर २३ फरवरी, १९२१ ई. को शहीद सिंघों का अंतिम संस्कार किया गया। अंतत: अंग्रेज सरकार को सिक्खों के आक्रोश के आगे झुकना पड़ा और उसने गुरुद्वारा साहिब की चाबियां सिक्खों को सौंप दीं।

महंतों से गुरुद्वारा साहिबान स्वतंत्र करवाने हेतु सिंघों, सिंघनियों और भुजंगियों ने जो कुर्बानियां दी हैं, उन्हें कभी भुलाया नहीं जा सकता। गुरुद्वारों के सम्मान एवं पवित्रता के लिए गुरु के सच्चे सिक्ख व सेवक हर तरह की कुर्बानी देने के लिए सदा तैयार रहते हैं। गुरुद्वारा श्री ननकाणा साहिब के साके के शहीद सिंघों को याद करते हुए हम उन्हें कोटि-कोटि प्रणाम करते हैं! नमन करते हैं!

जैतो के मोर्चे का वृत्तांत : सरदार नरैण सिंह की जुबानी

*-डॉ. तेजिंदर पाल सिंह**

सरदार नरैण सिंह एक ऐसी विलक्षण शख्सियत का नाम है, जिसका ज़िक्र चाहे अकादमिक जगत में तो ज्यादा जाना-पहचाना नहीं, मगर सिक्ख पंथ के प्रचार और प्रसार में इनके द्वारा निभाई गई भूमिका की बदौलत इनका नाम सिक्ख इतिहास के पन्नों पर सुनहरी अक्षरों में लिखा जा सकता है। सरदार नरैण सिंह का जन्म स. बूटा सिंह के घर २६ नवंबर, १९०१ ई. को गाँव बूटा सिंह वाला, ज़िला शेखूपुरा में हुआ। माता मिलाप कौर ने आपको अति लाड़-प्यार के साथ पाला। सरदार नरैण सिंह के पिता बड़े नेक, ईमानदार और गुरमुख व्यक्ति थे, जिनकी धार्मिक शख्सियत के साथ-साथ माता द्वारा दी गई शिक्षाओं का सरदार नरैण सिंह पर गहरा प्रभाव पड़ा। सरदार नरैण सिंह की माता बड़े धार्मिक विचारों वाली स्त्री थी। गुरबाणी के साथ गहरा प्रेम होने के कारण, जब भी समय मिलता, वे पाठ करती रहतीं, जिसका प्रभाव सरदार नरैण सिंह पर होना स्वाभाविक था।

सरदार नरैण सिंह ने सात वर्ष की आयु (१९०८ ई.) में अपने ननिहाल गाँव जवंद सिंघ वाला, ज़िला मुलतान (आजकल पाकिस्तान में) से अपनी प्राथमिक शिक्षा आरंभ कर १९३० ई. में स्नातकोत्तर (अंग्रेज़ी) उत्तीर्ण करने के साथ-साथ अनेक संस्थाओं में अध्यापन-कार्य किया। भारत में उस समय चल रही राष्ट्रीय भावना की लहर से आप अछूते न रह सके। इसी भावना के कारण आपने अपने विद्यार्थी जीवन के दौरान पंथक मसलों में विशेष रुचि दिखाई। सरदार नरैण सिंह के शिक्षा-काल के दौरान सिक्ख पंथ के सामने अनेक ऐसे धार्मिक मसले आए, जिनमें आपने बढ़-चढ़ कर भाग लिया। इन मसलों की यदि बात करें तो सरदार नरैण सिंह के विद्यार्थी जीवन की सबसे पहली घटना गुरुद्वारा श्री ननकाणा साहिब का शहीदी साका था, जिसका हृदयबेधक दृश्य आपने अपनी आंखों से देखा। यह शहीदी साका २० फरवरी, १९२१ ई. को गुरुद्वारा जन्म-स्थान श्री गुरु नानक देव जी, ननकाणा साहिब में घटित हुआ। इसमें भाई लछमण सिंघ, जिन्हें जंड के वृक्ष के साथ बाँध कर जिंदा जलाया गया था के साथ लगभग १५० अन्य सिंघ, महंत नरैण दास के पाले हुए गुंडों द्वारा बड़ी बेरहमी के साथ शहीद किये गए।

सन् १९२२ ई. के अगस्त महीने में मोर्चा गुरुद्वारा गुरु का बाग आरंभ हो चुका था। इस

**असिस्टेंट प्रोफेसर, धर्म अध्ययन विभाग, यूनिवर्सिटी कॉलेज, मीरांपुर (पटियाला)— १४७१११, फोन : ९९८८०-०४७३३*

मोर्चे में रोज़ाना १०० की संख्या में सिंघ श्री अकाल तख़्त साहिब पर अरदास कर 'गुरु का बाग को प्रस्थान करते। रास्ते में पुलिस इन सिंघों पर लाठियां वरसा कर इन्हें बेहोश कर देती। कुछ दिन इसी तरह चलने पर अंग्रेज पुलिस ने इन्हें गिरफ्तार करना शुरू कर दिया और सिंघों ने गिरफ़्तारियाँ देनी शुरू कर दीं। यह मोर्चा शांतमयी ढंग के साथ महंत सुंदर दास से गुरु-घर का प्रबंध और सम्पत्ति शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अधीन आने तक जारी रहा। इस मोर्चे में लगभग १५०० से अधिक सिंघ घायल हुए, कई शहीद हुए और ५६०५ सिंघ जेल में कैद किए गए।

सरदार नरैण सिंघ द्वारा दी गई उक्त मोर्चों की जानकारी अति महत्वपूर्ण है, क्योंकि प्रसिद्ध सिक्ख इतिहासकार डॉ. गंडा सिंघ ने भी उनके द्वारा दी गई जानकारी की पुष्टि की है। उनके शब्दों में, ''मेरी राय में इसमें दर्ज वाक्यात को बयान करने में सत्य को मुख्य रखा गया है। मेरा ख़्याल है कि इस पुस्तक के साथ सभी ऐसी बातें प्रकाश में आई हैं, जिनके प्रकट हुए बिना इतिहास में कई दरारें शेष रह जानी थी।''

सरदार नरैण सिंघ ने अपने जीवन-काल के दौरान तीसरा संघर्ष गुरुद्वारा श्री गंगसर साहिब पातशाही दसवीं, जैतो का मोर्चा के रूप में देखा, जिसके बारे में विस्तृत वर्णन निम्नानुसार नीचे दिए अनुसार है :—

नाभा रियासत का मसला अंग्रेज़ सरकार और महाराजा रिपुदमन सिंघ का आपसी मसला होने के बावजूद, महाराजा रिपुदमन सिंघ भाई फूल के वंश में से होने के कारण और सिक्ख धर्म के प्रति पंथक जज़्बात रखने के कारण चैतन्य सिक्खों में लोकप्रिय हो गया। यह देखते हुए अंग्रेज़ सरकार द्वारा उसे राजगद्दी से उतारने के लिए कई चालें चली गईं। उसके साथ हो रही ज्यादती ने इंडियन नेशनल कांग्रेस तथा अन्य राजसी नेताओं को भी उसका हमदर्द बना दिया था। इसके अलावा नाभा रियासत के जनसाधारण के मन पर भी महाराजा की शख़्सियत का गहरा प्रभाव था, जिसके लिए जनसाधारण ने भी महाराजा के रियासत से अलग किये जाने को बहुत बुरा मनाया।

५ अगस्त, १९२३ ई. को श्री अमृतसर साहिब में शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की सभा में महाराजा नाभा के प्रति सहानुभूति का प्रस्ताव पारित किया गया और निर्णय हुआ कि ९ सितंबर, १९२३ ई. को सभी जगह पर 'नाभा दिवस' मनाया जाये। समूह सिक्ख संगत से अपील की गई कि उस दिन जगह-जगह जुलूस निकाले जाएँ, दीवान आयोजित कर प्रस्ताव पारित किये जाएँ और महाराजा नाभा के साथ हुई बेइन्साफ़ी को दूर करवाने के लिए अरदास की जाये।

२५, २६ और २७ अगस्त, १९२३ ई. को इलाके की संगत द्वारा गुरुद्वारा श्री गंगसर साहिब, जैतो में दीवान आयोजित किया गया, जिसमें महाराजा की बहाली के प्रस्ताव पारित

किये गए। २७ अगस्त को भरे दीवान में से श्री गुरु ग्रंथ साहिब की ताबिया में शोभित ज्ञानी इंदर सिंघ को गिरफ्तार कर लिया गया। कुछ अन्य कार्यकर्ता भी गिरफ्तार किए गए। इस पर संगत ने फ़ैसला किया कि यह दीवान, जो पूर्व कार्यक्रम के अनुसार २७ तारीख को समाप्त होना था, इसे जारी रखा जाये, जब तक हुकूमत इसमें दख़ल देने से बाज नहीं आती।

९ सितम्बर, १९२३ ई. को पंजाब भर में तथा सिक्ख रियासतों के लगभग सभी शहरों में जुलूस निकाले गए, दीवान आयोजित कर प्रस्ताव पारित किये गए और अरदास की गई। जैतो मंडी में भी जुलूस निकला तथा गुरुद्वारा श्री गंगसर साहिब में दीवान सजा व श्री अखंड पाठ साहिब आरंभ किये गए।

इस समय नाभा रियासत का राज-प्रबंध अंग्रेज़ सरकार द्वारा नियुक्त मिस्टर विलियम जानस्टन के हाथ में था। महाराजा रिपुदमन सिंघ से सम्बन्धित किसी प्रकार का विचार करने, तकरीर करने या प्रस्ताव पारित करने की अनुमति नहीं थी। ९ सितंबर, १९२३ ई. वाले जुलूस में शामिल अकाली कार्यकर्ता गिरफ़्तार कर लिए गए, परन्तु अब तक किसी धार्मिक रीति-रिवाज़ में दख़ल नहीं दिया गया था। १४ सितंबर, १९२३ ई. को जब गुरुद्वारा श्री गंगसर साहिब, जैतो में दीवान सजा हुआ था और संगत श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी का श्री अखंड पाठ साहिब सुन रही थी तो हथियारबंद वर्दीधारी सिपाहियों का एक दस्ता गुरुद्वारा साहिब में दाख़िल हुआ और संगत में बैठे सभी श्रोताओं एवं सेवादारों को गिरफ़्तार कर ले गया। इसके साथ ही श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की ताबिया में बैठे श्री अखंड पाठ साहिब कर रहे ज्ञानी इंदर सिंघ को भी बाजू से पकड़ कर घसीट लिया गया और श्री अखंड पाठ साहिब खंडित किया गया।

सिक्खों के लिए श्री अखंड पाठ साहिब खंडित किया जाना, सिक्खी और श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बेअबदी था, जिसकी चर्चा चारों तरफ़ फैल गई और समूह सिक्खों के हृदय को भारी ठेस पहुंची। इस घटना ने महाराजा नाभा के सवाल को, जिसे सरकार राजनैतिक मसला कह कर शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी और सिक्ख संगत के दख़ल को नाजायज बताती थी, धार्मिक सवाल बना दिया। यह मात्र महाराजा नाभा के साथ हुई ज्यादती को दूर करने का सवाल नहीं रहा, बल्कि एक धार्मिक मसला बन गया और इसे सामूहिक रूप से सिक्खों का गुरुद्वारा साहिब में स्वतंत्रतापूर्वक एकत्र होने तथा श्री गुरु ग्रंथ साहिब का श्री अखंड पाठ साहिब करने में रुकावट पैदा करने का सवाल समझ लिया गया, जिस पर सारा सिक्ख पंथ एकजुट हो गया। इस तरह अंग्रेज़ हुकूमत ने सिक्खों को एक और मोर्चे के लिए खड़ा कर दिया।

इस मोर्चे का मसला खंडित श्री अखंड पाठ साहिब को अखंड रूप में पुनः चालू करना था, जिसके लिए यहाँ पर १०१ श्री अखंड पाठ

साहिब लगातार किये जाने का फ़ैसला कर २५-२५ सिंघों के जत्थे रोज़ाना गुरुद्वारा श्री गंगसर साहिब जैतो भेजने का गुरमता पारित हुआ। पहला जत्था १५ सितंबर, १९२३ ई. को श्री अकाल तख़्त साहिब से पैदल रवाना हुआ। गुरुद्वारा गुरु का बाग को जाने वाले जत्थों की भांति मन, वचन और कर्म के आधार पर अहिंसक रहने अथवा मुकाबला न करने का प्रण लिया गया। यदि ऐसा करते हुए सरकारी कर्मचारियों द्वारा कठोरता का सामना भी करना पड़ता, तो भी सिंघों को उच्च दर्जे की विनम्रता के साथ, बिना हाथ उठाए, सहन करना था। यह जत्था धीरे-धीरे पैदल चलता हुआ निश्चित दिन पर जैतो पहुँच गया, परन्तु गुरुद्वारा साहिब में दाख़िल होने से पूर्व ही गिरफ्तार कर लिया गया। ऐसा २५ सिंघों का एक जत्था प्रतिदिन श्री अकाल तख़्त साहिब से चलता और जैतो जाकर गिरफ़्तार हो जाता।

इस तरह गिरफ़्तार किये गए जत्थे को दो-तीन दिन साधारण घेराबंदी में रखा जाता, जहाँ जत्थे के लोग कई बार दो-दो दिन तक भूखे ही रहते। कइयों की मारपीट भी की जाती। फिर गाड़ी में बैठा कर नाभा बीड़ में ले जाया जाता या रेवाड़ी से आगे बावल ले जाकर भूखे-प्यासे छोड़ दिया जाता, जहाँ से ३०० मील सफ़र पैदल तय कर सिंघ सीधे श्री अमृतसर साहिब जाकर फिर दूसरे जत्थों में शामिल हो जाते। गुरुद्वारा श्री गंगसर साहिब, जैतो को रोज़ाना २५ सिंघों का जत्था भेजे जाने का सिलसिला निरंतर जारी रहा।

१५ सितंबर, १९२३ ई. से २५ सिंघ रोज़ाना जैतो के लिए तथा ५ जनवरी, १९२४ ई. से २५ अन्य सिंघ प्रतिदिन गुरुद्वारा भाई फेरू जी के लिए रवाना हो रहे थे। लगभग सभी पंथक अगुआ १३ अक्तूबर, १९२३ ई. को शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी वाले जत्थे में पकड़े गए थे और उसके बाद बने नेता भी ७ जनवरी, १९२४ ई. को पकड़े गए थे। इस तरह पंथ के चुनिंदा ११० अगुआ जेलों में जा चुके थे। अंग्रेज़ सरकार द्वारा २४ जनवरी, १९२४ ई. को शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के कार्यालय की तलाशी लेकर सभी ज़रूरी कागज़ात कब्ज़े में ले लिए गए। सरकार समझने लगी कि अब यह लहर दब जाएगी, क्योंकि इसे चालू रखने वाला कोई नेता शेष नहीं बचा था। यह उसका भ्रम था।

शहीदी जत्था

जैतो को प्रतिदिन २५-२५ सिंघ भेजे जाने पर कोई संतोषजनक निष्कर्ष निकलता न दिखाई देने पर कौम किसी गहरी सोच में पड़ गई। सोच-विचार कर फ़ैसला किया गया कि २५-२५ की बजाय ५००- ५०० के जत्थे गुरुद्वारा श्री गंगसर साहिब जैतो भेजे जाएँ और पहला ५०० सिंघों का 'शहीदी जत्था' २१ फरवरी, १९२४ ई. को जैतो पहुँच कर गुरुद्वारा साहिब का प्रबंध अपने हाथों में लेकर श्री अखंड पाठ साहिब आरंभ करे। पूरी योजना बना कर ९ फरवरी, १९२४ ई. को बसंत पंचमी

वाले दिन ५०० सिंघों का पहला जत्था श्री अकाल तख़्त साहिब से यह अरदास कर चला कि ये सिंघ गुरुद्वारा श्री गंगसर साहिब, जैतो में श्री अखंड पाठ साहिब करेंगे। ऐसा करते हुए उन्हें जो भी मुसीबतें झेलनी पड़ें, उन्हें बिना कोई प्रतिक्रम किये सहन करेंगे। जत्थेदार श्री अकाल तख़्त साहिब द्वारा इन्हें मन, वचन और कर्म के आधार पर मुकाबला न करने का हुक्म दिया गया, जिसका प्रण लेकर ये चले थे।

शहीदी जत्था ९ से २० फरवरी, १९२४ ई. तक पैदल कई गाँवों में पड़ाव करता हुआ चलता गया। हर पड़ाव पर इलाके के लोग हज़ारों की संख्या में इकठ्ठा होते, दीवान सजते और संगत द्वारा जत्थे की सेवा की जाती। सरकार द्वारा कई गाँवों में, ख़ास कर नाभा, पटियाला, फरीदकोट, संगरूर रियासतों में जत्थे की सेवा करने से लोगों को रोका गया। कई जगह पुलिस गाँवों को घेरे में लेकर लोगों को जत्थे के पास जाने से भी रोकने का यत्न करती और जो लोग जत्थे की सेवा करते, उन पर कई तरह की ज्यादती करती। जत्थे के पहुँचने पर गाँव फूल के सभी गेट बंद कर पहरा लगा दिया गया, ताकि कोई गांववासी गाँव से बाहर जाकर जत्थे की सेवा न कर सके। बावजूद इसके, कई आदमी दीवार फांद कर बाहर निकल गए और जत्थे को जल-पान छकाया। दरअसल, सिंघों का जज़्बा ही ऐसा था कि कोई भी सिंघ अपने गुरु की हुई बेअदबी बरदाश्त न कर सका। गुरु के प्रति गहरा प्रेम होने के कारण उन्होंने अपनी जान पर खेल कर भी संगत की मदद की थी।

जत्थे का आखिरी पड़ाव २० फरवरी, १९२४ ई. को फरीदकोट के गाँव बरगाड़ी में था। २१ फरवरी को प्रातः काल 'आसा की वार' के कीर्तन और दीवान की समाप्ति के बाद जत्थे ने जैतो, जो कि वहाँ से ५-६ मील की दूरी पर था, की तरफ कूच किया। संगत में महिलाएं भी शामिल थीं, जो जत्थे के पीछे-पीछे चल रही थीं। कांग्रेसी नेता डॉक्टर किचलू, प्रिंसिपल गिडवानी और न्यूयार्क टाईम्स के प्रतिनिधि मिस्टर ज़िमन्द कार में जत्थे के साथ-साथ जा रहे थे। नाभा रियासत की सीमा में दाख़िल होते ही इन कांग्रेसी नेताओं को वहाँ पर रोक लिया गया। जत्थे के आगे पांच सिंघ निशान साहिब पकड़े हुए जा रहे थे और जत्था ४-४ सिंघों की कतारों में चल रहा था। बीच में श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की पालकी सुशोभित थी। गुरुद्वारा श्री गंगसर साहिब को जाने वाले रास्ते पर तारें लगी हुई थीं और पुलिस का सख़्त पहरा था। गुरुद्वारे के पास ही किले पर मशीनगनें तैनात की हुई थीं और हर तरफ़ फ़ौज व पुलिस बंदूकें ताने खड़ी थी। विल्सन जानस्टन एडमिनिस्ट्रेटर तथा अन्य आफिसर मौजूद थे। जत्था गुरुद्वारा श्री टिब्बी साहिब से लगभग १५० गज़ पीछे था कि एक यूरोपीय आफ़िसर ने जत्थे को आगे बढ़ने से रोका और कहा कि "आगे बढ़ोगे तो गोली चलेगी।" यह हुक्म सभी ने सुना, मगर जत्था

रुका नहीं तथा गुरुद्वारा श्री टिब्बी साहिब की तरफ बढ़ता गया। एडमिनिस्ट्रेटर द्वारा झंडी दिखाए जाने पर पल भर में ही जत्थे पर तीनों तरफ से गोलियां बरसनी शुरू हो गईं। कुछ समय पश्चात् पुन: गोली चली। यह गोलीबारी पाँच मिनट तक चलती रही, परन्तु जत्था मुकम्मल शांतिपूर्वक आगे बढ़ता गया। जो सिंघ गोली खाकर गिर पड़े, यदि उन्हें उठाया नहीं जा सका तो उन्हें वहीं पर छोड़ जत्था आगे बढ़ने से नहीं रुका। जत्थे के सिंघों के अलावा वहाँ मौजूद संगत को भी गोलियाँ लगीं। एक महिला (बीबी बलबीर कौर) की गोद में उठाया हुआ बच्चा गोली लगने से शहीद हो गया। वो महिला गुरु-आस्था में दृढ़ आगे बढ़ती गई। श्री गुरु ग्रंथ साहिब की पालकी को हर तरह की गोली की मार से बचाया गया। गोली बंद होने तक सारी संगत गुरुद्वारा श्री टिब्बी साहिब पहुँच चुकी थी। उसके पश्चात् जत्थे के सिंघों व संगत में से हुए शहीद व घायल हुए लोगों को उठा कर गुरुद्वारा श्री टिब्बी साहिब लाने का यत्न आरंभ हुआ, परंतु फ़ौज और पुलिस ने सिंघों को ऐसा करने से भी रोक दिया।

सरदार नरैण सिंघ के अनुसार गुरुद्वारा श्री टिब्बी साहिब के आस-पास किसी को जाने की अनुमति न होने के कारण वहाँ पर हुए शहीदों की संख्या का सही अनुमान नहीं लग सका। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अनुसार वहाँ पर लगभग तीन सौ सिंघों के गोली का निशाना बनने या अन्य तरह से मारे जाने या घायल होने का अनुमान है, जिनमें से एक सौ सिंघ शहादत प्राप्त कर गए। संगत में से जो शहीद हुए या घायल हुए, उनकी सही गणना नहीं हो सकी। शहीद और घायल सिंघों को छोड़ कर शेष जत्थे और संगत में से सात सौ आदमी उसी मौके पकड़ लिए गए और एक तंग जगह, जहाँ मुश्किल से दो-ढाई सौ आदमी ही समा सकते थे, में बंद किये गए। कईयों को बेदर्दी के साथ मारा गया और सरकार द्वारा तैयार किये एक बयान पर दस्तखत कर देने के लिए मजबूर किया गया। उन्हें आवश्यक वस्त्र और रोटी न मिलने के कारण जो तकलीफ़ हुई, उसका तो कोई हिसाब नहीं। कुछ महीने के पश्चात् इन बंदियों को तीन सौ मील दूर बावल ले जाकर किले में घोड़ों के अस्तबल में बंद कर दिया गया। वहाँ पर उन्हें आठ पहर में एक बार अधपकी रोटी दी जाती, जिस कारण कई बंदी बीमार पड़ गए। दो महीने तक इस दशा में रखे जाने के बाद इन्हें थोड़ी-थोड़ी संख्या में कई दिनों में किले से बाहर निकाला गया। दृढ़संकल्पी सिंघों ने फिर गुरुद्वारा श्री गंगसर साहिब की तरफ पैदल प्रस्थान कर दिया। इनमें से ६० सिंघों के पुन: जैतो पहुँचने पर इन्हें इतना मारा गया कि तीन सिंघ तो उसी वक्त शहीद हो गए और बहुत-से घायल हुए।

गुरुद्वारा श्री गंगसर साहिब, जैतो में पाँच सौ सिंघों के जत्थे के साथ घटित ऐसी दर्दनाक

घटना के बावजूद भी सिंघों में गुरुद्वारा श्री गंगसर साहिब जाने व श्री अखंड पाठ साहिब जारी रखने का जोश और भी बढ़ गया और गलियों-बाज़ारों-गाँवों में आम बच्चे यह गाते हुए सुने जाते थे— ''नाभे नूं ज़रूर जावांगा, भावें सिर कट जावे मेरा!''

अन्य शहीदी जत्थे : २१ फरवरी, १९२४ ई. के दर्दनाक घटनाक्रम के पश्चात् शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की तरफ से दूसरा पाँच सौ सिंघों का जत्था जैतो भेजे जाने का एलान किया गया, जिसके लिए देश भर में जगह-जगह से सिंघ श्री अमृतसर साहिब पहुँच कर जत्थे में शामिल होने के लिए तैयार हुए। जत्थे में शामिल होने की माँग इतनी ज़्यादा थी कि देर से पहुँचे सिंघों को निराश होकर इसके बाद जाने वाले जत्थे में अपने नाम दर्ज करवाने पड़े। दूसरा पाँच सौ सिंघों का जत्था पहले की तरह श्री अकाल तख़्त साहिब से अनुमति प्राप्त कर २८ फरवरी, १९२४ ई. को श्री अमृतसर साहिब से पैदल रवाना हुआ। पहले जत्थे की हुई शहादत ने इस जत्थे की आस्था को और सुदृढ़ कर दिया। जत्थे ने फ़ैसला किया कि जब तक गुरुद्वारा श्री गंगसर साहिब में १०१ श्री अखंड पाठ साहिब सम्पूर्ण न हो जाएँ, वो वापस नहीं लौटेगा। जत्थे को रवाना करते समय मोहन दास कर्मचन्द गांधी की शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के नाम हुई भयानक शहीदियों को मुख्य रखते हुए दूसरा जत्था न भेजने के सम्बंध में एक तार २१ फरवरी को आई, परन्तु मोहन दास कर्मचन्द गांधी और ख़ालसे की विचारधारा में जमीन-आसमान का अतंर था। गुरु के सिंघ शहीदी-मार्ग पर चलते हुए कहा करते थे कि यदि यह शरीर किसी बहाने गुरु के लेखे लग जाये तो इससे ज्यादा ख़ुशी की बात और क्या हो सकती है!

श्री अकाल तख़्त साहिब के हजूर जत्था अरदास कर चुका था, अत: यह ५०० सिंघों का दूसरा शहीदी जत्था भी लगभग चालीस हज़ार की एकत्र हुई संगत को 'वाहिगुरु जी की फतह' बुलाता हुआ गुरुद्वारा श्री गंगसर साहिब के मार्ग पर चल पड़ा। प्रस्थान से पूर्व कितनी ही माताओं, बहनों ने अपने पुत्रों, भाइयों आदि के गले में फूलों की मालाएं पहनाईं और सहर्ष उन्हें श्री गुरु ग्रंथ साहिब के सम्मान की खातिर शहीद होने का संदेश देकर रवाना किया। एक माँ का बड़ा पुत्र इससे पूर्व पहले जत्थे में शहादत प्राप्त कर गया था। उसने दूसरे पुत्र को भी माला पहनाते हुए कहा, ''मैं बड़ी भाग्यशाली हूंगी, अगर मेरा दूसरा पुत्र भी गुरु-लेखे लग जाये।'' जत्थे में से कई सिंघों ने चलने से पूर्व जत्थेदार श्री अकाल तख़्त साहिब को यह लिखित में दिया कि अगर वे शहीद हो जाएं तो उनके हिस्से की जायदाद गुरु-पंथ को अर्पण हो। एक नयी बात जो इस बार की गई, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की तरफ से आम संगत के नाम यह अपील थी कि जत्था जहाँ भी ठहरे, वहाँ की स्थानीय संगत जत्थे की सेवा करने के बाद जत्थे को गाँव से बाहर तक

साथ जाकर विदा करना चाहे तो अवश्य करे परन्तु उससे आगे जत्थो के साथ बिल्कुल न जाये।

यह जत्था कई स्थान पर पड़ाव करता हुआ १३ मार्च, १९२४ ई. को जैतो के निकट पहुँच गया। जत्थे ने अगले दिन १४ मार्च को गुरुद्वारा श्री गंगसर साहिब में दाख़िल होना था। उधर १४ मार्च को प्रातः काल में पंडित मदन मोहन मालवीय कौंसिल के कई अन्य सदस्यों एवं नेताओं सहित जैतो पहुँच चुके थे और एडमिनिस्ट्रेटर पर जत्थे को गुरुद्वारा साहिब के अंदर जाने तथा १०१ श्री अखंड पाठ साहिब करने की अनुमति देने के लिए दबाव डाल रहे थे। एडमिनिस्ट्रेटर ज्यादा से ज्यादा जत्थे के एक सप्ताह तक वहाँ पर ठहरने और एक या दो बार में सभी पाठ सम्पूर्ण कर लेने के लिए कह रहा थी, जबकि जत्था कोई बंदिश मानने को तैयार नहीं था। आखिर ३ बज कर ३० मिनट पर जत्था गुरुद्वारा श्री गंगसर साहिब के पास पहुँच गया। इस बार आम संगत साथ में नहीं थी। इस जत्थे के आगे घुड़सवार पुलिस वाले और फ़ौज रास्ता रोके खड़ी थी तथा बाकी सारी तैयारी पूर्व की भांति ही थी। इस बार गोली नहीं चली और जत्थे की गिरफ़्तारी का हुक्म दिया गया। जत्थे ने पूर्ण शान्ति सहित अपने आप को पेश किया। तत्पश्चात् उन्हें किले में बनाई एक घेराबंदी में कैद किया गया। कुछ दिन के पश्चात् जत्थे को नाभा बीड़ में बहुत गंदी और घिनौनी जगह पर कैद कर रखा गया।

तीसरा ५०० सिंघों का जत्था पूर्व की भांति ही २२ मार्च को श्री अकाल तख़्त साहिब से रवाना हुआ। प्रत्येक जत्थे का जैतो पहुँचने के लिए अलग रास्ता होता और हर जगह सभी धर्मों के लोगों द्वारा जत्थे का स्वागत व सेवा की जाती। हर बार कई कांग्रेसी नेता और कौंसिल व असेंबली के सदस्य जत्थे को रवाना करते समय एवं जैतो आगमन के समय उपस्थित होते। इस बार जत्थे के प्रस्थान के समय लाला लाजपत राय, डॉ. किचलू, आसाम के श्री फूखण, दीवान चमन लाल, पटना से श्री दीप नारायण और श्री पानीकर उपस्थित थे। श्री पानीकर सचिव 'अकाली सहायक ब्यूरो', जो कांग्रेस द्वारा स्थापित किया गया था, ने कुछ समय जत्थे के साथ रह कर सभी हालात आंखों से देखे। श्री पानीकर लिखते हैं कि "जो कुछ जत्थे और जुलूस से सम्बन्धित मैंने आंखों से देखा, उससे मुझे विश्वास हो गया कि सरकार चाहे कुछ भी कहे, सिक्खों की समूची ग्रामीण जनसंख्या अकालियों के साथ है। यह किसी एक दल की लहर नहीं। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी का ग्रामीण लोगों पर बेमिसाल प्रभाव है। दूसरी बात, जिसने मुझे बहुत प्रभावित किया, वो हिंदू-मुसलमानों की जत्थे के साथ बड़ी हमदर्दी थी। हिंदू-मुसलमानों का जत्थे की सेवा और सहायता में विशेष योगदान था। सिक्ख धर्म और कौमियत दोनों नुक्तों से जत्था लोक-मन को बड़ी शिक्षापूर्ण दिशा प्रदान

करता था।''

यह जत्था ७ अप्रैल, १९२४ ई. को जैतो पहुँचा, जहाँ इसके स्वागत के लिए फ़ौज तथा पुलिस की तरफ से पहले की तरह ही तैयारी की हुई थी। इस समय स. तारा सिंघ मोगा एम. एल. सी., मियां फ़ज़्ल हक, स. करतार सिंघ सदस्य असेंबली और फरीदकोट के लाला इज्जत राय पहुँचे हुए थे। ये पौने पाँच बजे शाम को जत्थे से जा मिले। इनके कथनानुसार जत्था बड़े उल्लास सहित ''सतिनामु सतिनामु सतिनामु जी, वाहिगुरु वाहिगुरु वाहिगुरु जी'' जपता हुआ आगे बढ़ रहा था। एक जत्थे को रोक कर छोटे-छोटे दलों में कर हथकड़ियों और रस्सियों के संग जकड़ लिया गया और पहले की तरह ही किले में कैद कर दिया गया। कुछ दिनों के बाद इन्हें भी नाभा बीड़ में पहुँचाया गया। इस दौरान सिंघों को फ़ौजी सिपाही बुरी तरह से घसीटते, उनकी पगड़ी उतार कर केश खुले छोड़ देते और बंदूक का बट्ट व ठोकरें मार-मार कर उनका सब्र परखते। जवाब में सिंघों के मुंह से ''वाहिगुरु वाहिगुरु वाहिगुरु'' की ध्वनि निकलती थी। ५०० सिंघों का चौथा जत्था श्री अनंदपुर साहिब से २७ मार्च को और पाँचवाँ जत्था लायलपुर से १५ अप्रैल को पैदल रवाना हुआ।

सभी जत्थे पहले श्री अकाल तख़्त साहिब पर उपस्थित होते और पुलिस कार्यवाही का विरोध न करने तथा गुरुद्वारा श्री गंगसर साहिब में श्री अखंड पाठ साहिब करने का प्रण लेते हुए जैतो के लिए प्रस्थान करते। इसी प्रकार छठा जत्था फ़िरोज़पुर के सिंघों का ९ मई, १९२४ ई. को श्री अमृतसर साहिब पहुँचा और १० मई को अरदास कर जैतो की तरफ चल पड़ा। छठे जत्थे के साथ छोटी आयु (१२ से १६ वर्ष) के २२ लड़के थे। २९ जून को जैतो पहुँचने पर जत्थे को गिरफ़्तार किये जाने के बाद एक घंटे के लिए कड़कती धूप में तपती रेत पर खड़ा रखा गया। तत्पश्चात् जत्थे में से उन २२ लड़कों को छाँट कर अलग कर लिया गया और जैतो से नाभा लाकर 'कार ख़ास' नामक हवालात में बंद किया गया। इस हवालात में एक अलग हवालात थी, जिसका बाहरी दरवाजा खोलने पर एक दस-बारह फुट आकार का आंगन था। इस आंगन के एक तरफ़ छोटा-सा ९-१० फुट का लोहे का एक पिंजरा था। उसका दरवाजा खोल कर इन २२ लड़कों को अंदर कैद किया गया। ज्येष्ठ-आषाढ़ की गर्मी, लोहे की सलाखों वाला ९-१० फुट आकार का पिंजरा और उसके अंदर बाईस लड़कों का बंद होना।... पिंजरे में एक कोने में पेशाब करने के लिए खुले मुँह वाला मिट्टी का घड़ा रखा हुआ था, मल-त्याग करने के लिए कोई प्रबंध नहीं था। दिन भर पीने के लिए पानी भी नहीं मिला। रात को एक घड़ा पानी दिया गया। खाने के लिए न पहले और न ही वहाँ पहुँच कर कुछ दिया गया। दूसरे दिन दस बजे रोटियों का टोकरा अंदर रख दिया गया। इसके साथ कुछ दाल भी थी, परन्तु इसमें एक

तिहाई से ज्यादा (दाल की अपेक्षा तीन गुणा अधिक) कंकड़ थे, जिस कारण किसी ने दाल नहीं खाई। केवल रूखी रोटियाँ, अंदर ठूंस कर पानी के घूँट भर कर पेट की आग बुझाई।

बारह बजे एक हवलदार कुछ सिपाहियों सहित आया। उसने चार-चार लड़कों को बारी-बारी से पिंजरे से बाहर लाकर बगल के कमरे में ले जाकर बहुत बुरी तरह से मारा, ऊँचा उठा कर धरती पर पटक-पटक कर मारा। उनके घर, जगह और पिता का नाम पूछते रहे, परन्तु किसी लड़के ने भी अपना पता नहीं बताया। आखिर जब सभी की मार-पिटाई हो गई तो पिंजरे में डाल कर ताला लगा दिया गया। यह कार्रवाई सात दिन तक चलती रही। इन दिनों में किसी एक ने भी अपना पता नहीं बताया। इतनी मार-पिटाई और भूख-प्यास के कष्ट से लड़के अत्यंत निढाल हो गए थे। आठवें दिन इन्हें गाड़ी में डाल कर धूरी स्टेशन पर उतार दिया गया, जहाँ से कुछ सज्जन इन्हें धूरी के गुरुद्वारा साहिब ले गए, मरहम-पट्टी करवाई और श्री अमृतसर साहिब पहुँचाया गया।

सातवाँ व दोआबा क्षेत्र के जिलों का जत्था श्री अनंदपुर साहिब से १ जून को और आठवाँ जत्था ज़िला शेखूपुरा का २२ मई, १९२४ ई. को श्री ननकाणा साहिब से चला। नौवां जत्था श्री अमृतसर साहिब ज़िले का २५ जून को यहीं से जैतो की तरफ चला। दसवाँ जत्था, जिसमें लाहौर, श्री अमृतसर साहिब, गुरदासपुर आदि के सिंघ शामिल थे और ग्यारहवाँ जत्था जिसमें लुधियाना व फ़िरोज़पुर के सिंघ शामिल थे, सामूहिक रूप से १३ जुलाई को श्री अमृतसर साहिब से रवाना हुआ। जत्थों का जाना केवल पंजाब के जिलों तक ही सीमित नहीं रहा, बल्कि २९ जून, १९२४ ई. को बंगाल के एक सौ सिंघों का जत्था कलकत्ता से बड़ी सिक्ख संगत गुरुद्वारा से चलकर पटना, बनारस, इलाहाबाद, लखनऊ, कानपुर, दिल्ली, सहारनपुर, अंबाला आदि स्थानों पर ठहरता हुआ १३ जुलाई, १९२४ ई. को श्री अमृतसर साहिब पहुँचा।

२१ फरवरी, १९२४ ई. को जैतो में हुई शहीदियों की चर्चा इतनी ज़्यादा हो गई थी कि विदेशों में बसते सिंघ भी गुरु-प्यार में कई स्थानों से जैतो की तरफ जाने वाले जत्थों में शामिल होने के लिए श्री अमृतसर साहिब पहुँचे। कनाडा से ११ सिंघों का जत्था १७ जुलाई, १९२४ ई. को रवाना हुआ, जो १४ सितंबर, १९२४ ई. को कलकत्ता में जहाज़ से उतरा और देश के कई बड़े-बड़े शहरों से होता हुआ २८ सितंबर, १९२४ ई. को श्री अमृतसर साहिब पहुँचा। तत्पश्चात् पंजाब के कई नगरों, गाँवों और शहरों में प्रचार करने के पश्चात् २१ फरवरी, १९२५ ई. को जैतो जाकर गिरफ़्तार हो गया। इसी तरह हाँगकाँग से एक जत्था २४ फरवरी, १९२५ ई. को, शंघाई से २५ सिंघों का जत्था १५ जुलाई, १९२५ ई. को श्री अमृतसर साहिब पहुँचा।

५०० सिंघों का बारहवाँ जत्था १७

अगस्त, १९२४ ई. को, तेरहवाँ जत्था १८ सितंबर, १९२४ ई. को, चौदहवां जत्था १५ दिसंबर, १९२४ ई. को, पंद्रहवां जत्था १ मार्च, १९२५ ई. को, सोलहवां जत्था १७ अप्रैल, १९२५ ई. को श्री अमृतसर साहिब से चल कर अनेक गाँवों और शहरों में से गुज़रता हुआ जैतो पहुँच कर गिरफ़्तार हुआ। २७ अप्रैल, १९२५ ई. को १०१ सिंघों का जत्था श्री अकाल तख़्त साहिब से लायलपुर जाकर पड़ाव-दर-पड़ाव करता हुआ जैतो की तरफ जा रहा था कि रास्ते में सूचना मिली कि सरकार ने श्री अखंड पाठ साहिब करने से सम्बन्धित हर तरह की लगाई हुई पाबंदी हटा दी है। अतएव इस जत्थे ने वहाँ पहुँच कर पहला श्री अखंड पाठ साहिब आरंभ किया। इस पाठ के भोग वाले दिन ही शंघाई वाला जत्था जैतो पहुँचा था।

इस प्रकार १४ सितंबर, १९२३ ई. को गुरुद्वारा श्री गंगसर साहिब में खंडित किये गए श्री अखंड पाठ साहिब को हर तरह की पाबंदियाँ से मुक्त करा कर नये सिरे से आरंभ करने के लिए सिंघों को लगातार एक वर्ष दस माह लंबा संघर्ष करना पड़ा। इस संघर्ष के दौरान कितने ही सिंघ शहीद और घायल हुए। कई अपाहिज होकर उम्र भर के लिए मुहताज हो गए। अनेक लोगों की जायदाद और घर-घाट ज़ब्त कर उन्हें सम्बन्धित रियासतों से देश-निकाला दिया गया। अनेक को मुलाज़िमत और सरदारी से अलग कर दिया गया। सिंघों ने इस पूरे मोर्चे के दौरान जेलों में जो कष्ट झेले, उनका वर्णन करना असंभव है।

यह मोर्चा पौने दो वर्ष से अधिक समय तक चलता रहा। यह कैसे ख़त्म हुआ और इसके क्या परिणाम निकले, यह लम्बी दासतां है। यहाँ केवल यह कहना काफ़ी है कि ख़ालसे ने इस मोर्चे के माध्यम से दुनिया के लोगों को संदेश दिया कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी का सम्मान उनके लिए सर्वप्रथम है। गुरु साहिब का अदब बरकरार रखने के लिए वे सिर-धड़ की बाज़ी लगा सकते हैं। गुरु साहिब के प्रेम-मार्ग पर चलते हुए सिंघों ने अंग्रेज़ सरकार को यह भी संदेश दिया कि सिक्ख जंगों-युद्धों में कौशल दिखाने के साथ-साथ शांतमयी ढंग से रोष भी ज़ाहिर कर सकते हैं। ख़ालसे ने लगातार १०१ श्री अखंड पाठ साहिब कर श्री अकाल तख़्त साहिब के हजूर किये प्रण और की गई अरदास को सतिगुरु की कृपा द्वारा पूरा किया। इस मोर्चे में जिन सिंघों-सिघंनियों, नवयुवकों ने शहादत प्राप्त की, जो घायल हुए, अपाहिज हुए, जिनकी जायदाद जब्त की गई, उनकी कुर्बानी को, उनके संघर्ष को सजदा करते हुए हमारा शीश झुकता है। हमें अपने इन पुरखों पर फख्र है!

सिक्ख इतिहास के साथ काशी का सम्बन्ध

*-डॉ. चमकौर सिंघ**

गुरु-काल से ही विभिन्न इलाकों की संगत गुरु-घर के साथ जुड़नी शुरू हो गई थी, जिनमें से काशी (बनारस, वाराणसी) की संगत का वर्णन सिक्ख इतिहास के स्रोतों में स्पष्ट रूप से प्राप्त होता है। इसका प्रमाण काशी में 'बड़ी संगत' और 'छोटी संगत' नाम पर गुरुद्वारा साहिबान का स्थापित होना है। काशी को तीन गुरु साहिबान- श्री गुरु नानक देव जी, श्री गुरु तेग़ बहादर साहिब जी और श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का चरण-स्पर्श प्राप्त है, जिनकी आमद की याद में काशी में अलग-अलग गुरुद्वारा साहिबान शोभित हैं।

सिक्ख पंथ के साथ काशी का सम्बन्ध पहली बार उस समय बना, जब प्रथम गुरु श्री गुरु नानक देव जी जगत-उद्धार हेतु अपनी पहली उदासी के दौरान यहाँ पर पधारे। गुरुद्वारा गुरु का बाग़ नामक स्थान पर गुरु जी का पंडित चतुरदास के साथ संवाद हुआ। काशी में श्री गुरु नानक देव जी को गंगा के किनारे तुलसी माला, सालिग्राम के बिना बैठे देख कर पंडित चतुरदास ने आशंका व्यक्त किया कि आप किस तरह के साधु हो? वार्तालाप के दौरान गुरु जी ने पंडित चतुरदास को वहमों-भ्रमों और कर्मकांड से मुक्त होकर एक प्रभु के साथ जुड़ने एवं सत्य-भरपूर मानव जीवन-मूल्यों वाला जीवन जीने का उपदेश देकर अपना सिक्ख बनाया।

नवम् पातशाह श्री गुरु तेग़ बहादर साहिब जी अपनी पूरब की यात्रा के दौरान आसाम-बंगाल की तरफ जाते समय काशी पहुँचे, जहाँ गुरुद्वारा बड़ी संगत सुशोभित है। जवेहरी मल्ल मसंद ने गुरु जी का स्वागत किया और गुरु जी ने भाई कल्याण मल्ल के घर निवास किया। यहाँ पर गुरु जी के चोले (चोगा) और जोड़े (जूते) आज भी संभाल कर रखे हुए हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की कुछ महत्वपूर्ण बीड़ों (स्वरूप) के अलावा यहाँ नवम और दशम गुरु साहिबान सहित माता साहिब देवां जी की तरफ से यहाँ की संगत और सेवकों को भेजे गए एक दर्जन से ज्यादा हुकमनामे भी मौजूद हैं। इन स्थानों के अलावा श्री गुरु तेग़ बहादर साहिब जी ने अपनी यात्रा की वापसी के दौरान गुरुद्वारा छोटी संगत, गुरुद्वारा संगत मीरघाट नामक स्थानों पर चरण धरे। इन स्थानों को (बालक) श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के मुबारक चरण-कमलों का स्पर्श प्राप्त है।

पाउंटा साहिब में जब पंडित रघुनाथ ने शूद्र श्रेणी से सम्बन्धित कुछ सिक्ख विद्यार्थियों को 'देव-भाषा' संस्कृत पढ़ाने से इन्कार कर दिया तो श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने विभिन्न जातियों से सम्बन्धित पाँच सिक्खों को संस्कृत भाषा सीखने के उद्देश्य से १६८६ ईस्वी में काशी भेजा, जिन्हें सिक्ख पंथ में 'निरमले सिक्ख' कहा जाता है। इन पाँच सिक्खों के नाम— भाई राम सिंघ, भाई करम सिंघ, भाई गंडा सिंघ, भाई वीर सिंघ और भाई सैणा सिंघ थे। इन्होंने विद्या-प्राप्ति के लिए काशी में जिस स्थान पर निवास किया, वहाँ आजकल गुरुद्वारा श्री चेतन मठ बना हुआ है। इसी स्थान पर ही भाई गुरदास जी लम्बा समय रह कर गुरबाणी की अर्थ-व्याख्या किया करते थे और काशी के पंडितों के साथ संवाद रचाते रहे।

**निदेशक, पंथ-रत्न जत्थेदार गुरचरन सिंघ टौहड़ा इंस्टीट्यूट ऑफ अडवांस स्ट्डीज इन सिक्खिज़म, बहादुरगढ़, पटियाला—१४७००२, फोन : ९४१७९-३५४७४*

खालसा लायब्रेरी

—डॉ. मोहन सिंघ*

जिला गुरदासपुर की तहसील बटाला शहर में सिनेमा रोड पर मैं सपरिवार किराए के मकान में रहता था। गली से बाहर बाज़ार में निकलते ही कोने में एक टेलर मास्टर सरदार हरभजन सिंघ की दुकान थी। आते-जाते सरदार हरभजन सिंघ के साथ 'सति श्री अकाल' हो जाया करती थी और कभी-कभी मैं उसकी दुकान पर कुछ पल रुक भी जाता था। धीरे-धीरे हमारा सहचार बढ़ता गया।

एक बार बाबा जी (श्री गुरु नानक देव जी) के विवाह-पर्व के अवसर पर मेरा रैणसबाई कीर्तन समारोह में जाने का कार्यक्रम था। रात के लगभग आठ बजे थे। जब मैं कीर्तन समारोह में जाने हेतु तैयार हो रहा था तो अचानक सरदार हरभजन सिंघ अपने एक मित्र सहित हमारे निकटवर्ती कमरे (जिसकी चाबी हमारे मकान मालिक ने उन्हें दे रखी थी) में आकर बैठ गया और दोनों ने मदिरा-पान करना शुरू कर दिया। दो-तीन घंटे तक वे बैठे रहे और ऊँची आवाज में बातें करते रहे। मदिरा एवं मत्स्य-पकौड़ों की दुर्गंध हमें परेशान कर रही थी।

इस हाल में मैं अपनी पत्नी व बच्चों को अकेला छोड़कर कीर्तन सुनने के लिए न जा सका। इसके बाद आगामी दो-तीन दिन तक मैंने सरदार हरभजन सिंघ को न बुलाया, न उसकी तरफ देखा और न ही उसकी दुकान पर गया। मन में सोच लिया कि ऐसे नशेबाज़ इंसान से दूर रहना ही ठीक है। लगभग चौथे दिन सरदार हरभजन सिंघ हाथ जोड़े मेरे सामने आ खड़ा हुआ और कहने लगा — "प्रोफेसर साहिब! मुझे क्षमा कर दीजिए! मुझसे गलती हो गई।" मेरे कुछ बोलने से पहले ही वो पुन: बोल उठा— "मुझे मालूम है, आप किस बात से नाराज़ हो! मैं वादा करता हूं कि मैं दोबारा कभी मदिरा-पान नहीं करूंगा।"

मैंने कहा— "नहीं हरभजन सिंघ! यह सब कहने की बातें हैं। बुरी लत एक बार लग जाए, कहाँ छूटती है फिर! आज तू अपनी गलती मान रहा है, कल को तेरा वो मित्र फिर आएगा और

* फोन : ९८७२३-५५९४५

तुम लोग फिर पीने बैठ जाओगे!" उसका जवाब था— "प्रोफेसर साहिब! मैं उसके साथ दोस्ती नहीं रखूंगा!" मैंने कहा— "तो फिर इस लत को छोड़ने का पक्का इलाज कर!" वो बोला— "जी, पक्का इलाज क्या है?"

इस बार सरदार हरभजन सिंघ के शब्दों में अति विनम्रता व समर्पण की भावना झलक रही थी। मैंने अपनी बात को आगे बढ़ाया— "पक्का इलाज है — अमृत छक कर सिंघ सज जा!" इतना कहते ही मैं उसे 'सति श्री अकाल' बुलाकर आगे बढ़ गया। "चलो, शुक्र है, आपने सति श्री अकाल तो बुलाई है!" जाते-जाते सरदार हरभजन संघ के ये शब्द मेरे कानों में सुनाई दिए।

एक सप्ताह के पश्चात् सरदार हरभजन सिंघ ने अमृत छककर मुझे आ 'फतह' बुलाई। सरदार हरभजन सिंघ के चेहरे पर सिक्खी का गहरा रंग प्रत्यक्ष नज़र आ रहा था। वो कहने लगा— "सिक्ख सिद्धांतों के बारे में मुझे ज्यादा तो मालूम नहीं है, मगर मैंने अब अमृत छक लिया है। गुरु जी ने पाँच प्यारों के रूप में मुझे हुक्म किया है कि कोई बुरा काम नहीं करना! मेरे पास समय बहुत है। आप बताएं, अब मैं और क्या करूं?" मैंने सरदार हरभजन सिंघ को दो धार्मिक पुस्तकें थमाते हुए कहा— "ले, इन्हें पढ़ा कर!"

तीसरे दिन सरदार हरभजन सिंघ फिर आ गया— "जी, वे दोनों पुस्तकें मैंने पढ़ ली हैं! बहुत बढ़िया जानकारी प्राप्त हुई है उनमें से! और दीजिए पुस्तकें, मुझे पढ़ने को!"

सप्ताह के पश्चात सरदार हरभजन सिंघ ने फिर आकर 'फतह' बुलाई और कहा— "ये सभी पुस्तकें बड़ी ज्ञानवर्धक हैं। मैं सोच रहा हूं कि जैसे इन पुस्तकों का अच्छा प्रभाव मुझ पर पड़ा है, अगर अन्य लोगों को भी पढ़ाई जाएं तो उन पर भी इनका असर पड़ेगा। अगर आप अनुमति दें तो मैं दुकान पर आने वाले ग्राहकों को तथा अपने परिचितों को भी ये पुस्तकें पढ़ने हेतु दे दिया करूं?"

मैंने जज़्बाती होकर सरदार हरभजन सिंघ को अपने गले से लगा लिया। मेरे पास उस वक्त जितनी भी ४०-५० धार्मिक पुस्तकें थीं, वो मैंने सरदार हरभजन सिंघ के हवाले कर दीं। इस प्रकार एक 'खालसा लायब्रेरी' स्थापित हो गई। सरदार हरभजन सिंघ जीवन भर 'खालसा लायब्रेरी' के माध्यम से सिक्खी-प्रचार की सेवा में जुटा रहा।

(सधन्यवाद 'जीवन बदल गए' पंजाबी पुस्तक)

श्रवण-शक्ति का महत्व

-प्रिं. जोगिंदर सिंघ*

श्री गुरु नानक देव जी की बाणी 'जपु जी साहिब' एक अद्वितीय शाहकार, ईश्वरीय-रहमत का रूहानी चश्मा, भक्ति-रस का स्रोत, जीवन-प्रक्रिया के अनमोल सिद्धांतों का एक महकता गुलदस्ता, ईश्वर-प्राप्ति का एक सरल स्रोत है। परमात्मा में विश्वास करना, उसे मानना, बल्कि उसकी प्रभुता में अटल निश्चय रखना, उसका नाम सुनना और उसके सुमिरन में लीन होना ही 'जपु जी साहिब' का उपदेश और आदेश है। 'जपु जी साहिब' की चार पउड़ियां तो परमात्मा के नाम-श्रवण के महत्व को ही समर्पित हैं। परमात्मा का नाम श्रवण करने से सब्र, संतोष तथा ज्ञान प्राप्त होता है और न केवल क्लेश एवं संताप मिट जाते हैं, बल्कि जन्म-मरण के बंधन भी कट जाते हैं।

श्रवण-शक्ति दाता की तरफ से मानव को एक अनमोल देन है। दाता ने जिह्वा एक प्रदान की है, जबकि कान दो प्रदान किए हैं। श्रवण के महत्व पर ज़्यादा बल दिया गया है, ताकि मानव चार-चुफेरे से दाता प्रभु का संदेश, कुदरत के जलवों के पैग़ाम में से सुन सके। मानव कादिर (प्रभु) की कुदरत का कायल होकर, अपनी श्रवण-शक्ति द्वारा वर्षा की रुनझुन, आँधी की शां-शां, हवा की थिरकन, बादलों की गड़गड़ाहट, पक्षियों की चहचहाहट और झरनों की कल-कल करने जैसी आवाज़ों को जान सके, भिन्न-भिन्न जीव-जंतुओं और जानवरों की आवाज़ पहचान सके और विशेष रूप से मानव की भाँति-भाँति की बाणी को समझ सके, जांच सके एवं परख सके। समयानुसार कुदरती वातावरण कैसा राग आलाप रहा है? इसकी तरफ ध्यान धरना भी ज़रूरी है, जो कि श्रवण-शक्ति के कारण ही संभव है।

ज्ञान के नेत्र प्रत्येक व्यक्ति के लिए अनमोल हैं। इन नेत्रों में वास्तविक चमक बुद्धिमत्ता और सूझबूझ की होती है। उस श्रवण-शक्ति का ज्ञान किस काम का, अगर व्यक्ति को इतनी भी समझ न हो कि क्या सुनना है, किस प्रकार सुनना है और किसलिए सुनना है। अगर सचमुच मानव इन प्रश्नों के उचित उत्तरों के प्रति गंभीर है और सजग है, फिर वह जीवन-पद्धति का रस घोलना भी जानता है और जीवन का रस लेना भी जानता है।

बहुत बार ऐसे स्थिति-पक्ष से, मानव बेबस और लाचार हो जाता है। इच्छा के विरुद्ध बोले गए अच्छे-मंदे वचन श्रवण-शक्ति को प्रभावित

*१५३, पार्ट-१, हुडा, शाहबाद मारकंडा, जिला कुरुक्षेत्र (हरियाणा), फोन : ९०५०६-८०३७०

करते हैं, चाहे इन वचनों के प्रति व्यक्ति दिलचस्पी रखता हो या न। प्रत्येक वातावरण में विचरना स्वाभाविक है। न हर समय बंद कमरे में बैठा जा सकता है और न ही हर समय पर कानों में रुई देकर बंद किया जा सकता है। प्रभाव को स्वीकार करना या न करना व्यक्ति पर निर्भर करता है। अगर कोई सुरीली आवाज़ कानों में रस घोलेगी तो कटाक्ष भरे वचन व्यक्ति को बिच्छू की तरह डंक भी मारेंगे।

वैसे साधारण जीवन में वार्तालाप के समय मीठे, मधुर, सांगीतिक और प्यार-भरे बोल साधारण व्यक्ति को वश में कर लेते हैं। ऐसे बोल कानों को रास आते हैं, दिल को लुभाते हैं, दिमाग़ को तृप्त करते हैं, अंग-अंग को हर्षित करते हैं और व्यक्ति को सहज अवस्था में लाते हैं। ऐसा व्यक्ति सुखद, आनंदित और शांत अवस्थामयी वातावरण महसूस करता है। कटु वचन, दुर्वचन, पीड़ादायक, भड़काऊ और उत्तेजना भरे बोल, न केवल कानों को अखरते हैं, बल्कि दिल में उत्पात मचाते हैं, शोर करते और दिमाग़ पर गहरा प्रभाव डालते हैं। श्री गुरु नानक देव जी का फरमान है :

नानक फिकै बोलिऐ तनु मनु फिका होइ ।।
फिको फीका सदीऐ फिके फिकी सोए ।।

(श्री गुरु ग्रंथ साहिब, पन्ना ४७३)

अच्छे पौधों की छाया सुहावनी और रहमत भरी होती है। अच्छी संगत ही जीवन का नैतिक पक्ष सजाती है। अच्छी संगत में विचार- विमर्श के दौरान उत्पन्न उच्च कथन, शुद्ध प्रवचन और अनमोल दृष्टांत श्रवण-शक्ति के लिए वरदान सिद्ध होते हैं। ऐसी अवस्था में श्रवण-शक्ति व्यक्ति के विचारों और ख्यालों को उकसाती है, दिल को छूती है। हकीकत यह है कि श्रवण-शक्ति तो अपनी तरफ से अच्छे या बुरे श्रव्य बोलों के साथ इन्साफ कर राज़ी होती है। श्रवण-शक्ति से प्रभावित होकर, मानव का मन किसी कार्य में बाधा उत्पन्न करता है या सहायक होता है, यह तो मन की अच्छी या बुरी कारगुजारी पर निर्भर करता है। श्रवण- शक्ति का वास्तविक आशय अपने प्रवेश द्वार को खुला रख कर दिल-दिमाग़ तक संदेश को पहुंचाना है। विचार-शक्ति का काम है— विचारों को नकारना या स्वीकारना। श्रवण-शक्ति तो एक संदेशवाहक है। यह निर्णायक शक्ति से वंचित है। अच्छी संगत इस पक्ष से और महत्वपूर्ण बन जाती है कि साधारण मनुष्य लाभ लेने के पक्ष से अगर रौशन ज़मीर नहीं बन सका तो कम से कम वह कुकर्म जैसे काले धब्बे से तो बचा रहा है, इसलिए बुद्धिमान मनुष्य कुसंगति के हास्यास्पद व्यर्थ एवं भाव-रहित बोलों से दूर रहने के लिए ही यत्नशील रहता है। वह ऐसी संगत का सौदाई होता है जिसमें हरि का नाम हो। श्री गुरु अरजन देव जी फरमान करते हैं :

साध कै संगि सुनउ हरि नाउ ।।
साधसंगि हरि के गुन गाउ ।।

(श्री गुरु ग्रंथ साहिब, पन्ना २७२)

वास्तव में श्रोता की जिज्ञासु-वृत्ति, विचारों की रोचकता, वक्ता का व्यक्तित्व और उसका

अंदाज़-ए-बयान, श्रोता की श्रवण-शक्ति के लिए अत्यंत सहायक और प्रभावी होते हैं। यदि श्रवण के समय श्रोता श्रवण पक्ष से सावधान हो, सचेत और चौकस हो, मन की आँखों और वृत्ति-पक्ष से मगनचित्त हो और विशेष रूप से श्रवण की उत्साहित प्रवृत्ति के पक्ष से प्रेरित हो, ऐसे समय में बोले हुए बोल, श्रोता के दिल और दिमाग़ में स्वयं उतर जाते हैं। ऐसे अच्छे विचार अधिकांशतः बहुती बारी पक्का डेरा भी लगा लेते हैं। कई बार तो वक्त के अनमोल विचार श्रोता की बेरुख़ी और लापरवाही के कारण धूल-कौड़ियों में रुल जाते हैं।

संवेदनशीलता, एकसुरता और एकाग्रता श्रवण-शक्ति के महत्वपूर्ण लक्षण हैं। विचारों का तिरस्कार करना या उन्हें सम्मान देना बाद का पड़ाव है। कोई पुकार हो या फिर किसी दुखी मानवता की आवाज़ हो, उचित ही कहा गया है कि ''शवगृह में तूती की आवाज़ कौन सुनता है?''

बेबस और लाचार मानव चाहे रोए, चीखे, चिल्लाए, लेकिन समाज के कानों पर जूँ तक नहीं सरकती। किसी की मुसीबत में साथ देने की तो बात ही छोड़ो, कोई किसी दुखी इंसान की दर्द भरी दासतां भी सुन कर राज़ी नहीं।

कानों से कच्चे व्यक्ति तो एक कान से सुन कर, दूसरे कान से निकाल देते हैं। ऐसे व्यक्ति फूहड़, कमज़ोर हृदय वाले तथा गंभीरता से विहीन होते हैं। वास्तविकता यह है कि बातें सुनने का चस्का रखने वाले तो चुग़लख़ोर होते हैं। वे चुगली और निंदा करते हैं और अपने जैसे अन्य निन्दकों को सुनाते हैं। गुरबाणी में निंदा-चुगली करना और सुनना, श्रवण-अवस्था के नकारात्मक पक्ष माने गए हैं। ऐसे लोगों से बचने के लिए ही तो कहा जाता है कि भेदभरी बात पर्दे में किया करो। शुभ विचारों की तरफ और प्रभु का नाम श्रवण करने की तरफ, कानों का इस्तेमाल करना हमारा कर्त्तव्य भी है, कर्म भी है और धर्म भी है। ऐसा महत्व श्री गुरु अरजन देव जी महाराज, इस प्रकार फरमान करते हैं— ''सुनत जपत हरि नाम जसु ता की दूरि बलाई।।'' और फिर यह भी फरमान करते हैं कि ''भगत जना की बेनती सुणी प्रभि आपि।।'' अपनी आदतों के कारण हम ''सुणि सुणि रीणे कंन'' की अवस्था तक पहुंच जाते हैं, लेकिन हम बेमतलब, व्यर्थ और निंदनीय शब्द सुनने से बाज़ नहीं आते।

हकीकत तो यह है कि आज का दौर, शोर-शराबे या फिर ध्वनि-प्रदूषण का है। इस दुनियावी शोर के कारण कानों तथा मन को जरा भी चैन नहीं कि वे अपनी भीतरी आवाज़ को सुन सकें, सत्य को पहचान सकें और अकाल पुरख की आराधना कर सकें। श्रेष्ठ श्रवण-शक्ति तो वो है, जो श्रेष्ठ विचारों को ध्यानपूर्वक, धैर्यपूर्वक व सहजता के साथ सुने और एक सभ्य संदेशवाहक बन कर उन विचारों को मन तक पहुँचाने का प्रभावी अंदाज़ प्रकट करे।

ख़बरनामा

एडवोकेट धामी ने केरल के एक केंद्रीय विद्यालय में छोटे साहिबज़ादों की नकल किये जाने की निंदा की

श्री अमृतसर साहिब : २६ दिसंबर : शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के प्रधान एडवोकेट हरजिंदर सिंघ धामी ने केरल के पयानुर स्थित केंद्रीय विद्यालय में 'वीर बाल दिवस' पर आयोजित कार्यक्रम में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के छोटे साहिबज़ादों— बाबा जोरावर सिंघ जी और बाबा फतिह सिंघ जी की शारीरिक रूप में नकल करने की सख़्त शब्दों में निंदा की है। एडवोकेट धामी ने कहा कि साहिबज़ादों के शहीदी दिवस के अवसर पर साहिबज़ादों की नकल करना अति निंदनीय है और सिक्ख सिद्धांतों के विरुद्ध है। उन्होंने कहा कि केरल के पयानुर स्थित केंद्रीय विद्यालय के प्रशासन द्वारा बच्चों के द्वारा छोटे साहिबज़ादों की नकल करवा कर और इसकी तस्वीरें सोशल मीडिया पर डाल कर सिक्ख संगत की भावनाओं को आहत किया गया है। उन्होंने कहा कि चाहे शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी द्वारा इस घटना पर एतराज़ प्रकट करने के बाद उक्त विद्यालय ने अपने सोशल मीडिया एक्स मंच से एतराज़योग्य तस्वीर को हटा दिया है फिर भी केंद्र सरकार को ऐसी घटना की पुनरावृत्ति रोकने के लिए ठोस कदम उठाने की ज़रूरत है।

शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के प्रधान एडवोकेट धामी ने भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय, सांस्कृतिक मंत्रालय, महिला और बाल विकास मंत्रालय तथा केंद्रीय सेकेंडरी शिक्षा बोर्ड से कहा है कि वह राष्ट्रीय स्तर पर साहिबज़ादों के शहीदी दिवस को मनाते हुए सिक्ख सिद्धांतों और इतिहास के मद्देनज़र ही समारोह आयोजित करने संबंधी स्कूलों, कॉलेजों आदि को आदेश जारी करें और कहा जाये कि किसी भी प्रकार से सिक्ख सिद्धांतों के विरुद्ध कोई हरकत न की जाये।

एडवोकेट धामी ने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को सम्बोधित होते हुए कहा कि भारत सरकार द्वारा छोटे साहिबज़ादों के शहीदी दिवस को जो 'वीर बाल दिवस' नाम दिया गया है, यह श्री अकाल तख़्त साहिब और शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी सहित प्रमुख सिक्ख संस्थाओं ने स्वीकार नहीं किया है, इसलिए भारत सरकार शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की तरफ से सिफ़ारिश किये नाम 'साहिबज़ादे शहादत

दिवस' को प्रमाणित कर इस सम्बंध में गज़ट नोटिफिकेशन जारी करे। उन्होंने कहा कि सिक्ख सिद्धांतों के अनुसार साहिबज़ादों ने छोटी आयु में महान कारनामे करते हुए वीरतापूर्वक शहादत प्राप्त की, इसलिए सिक्ख कौम उन्हें 'बाबा' कह कर उनका सम्मान करती है और इसी रोशनी में ही सरकार को भी आगे बढ़ना चाहिए।

पूर्व प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंघ को शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी द्वारा शोक सभा आयोजित कर दी गई श्रद्धांजलि

श्री अमृतसर साहिब : २८ दिसंबर : शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के मुख्यालय स्थित सरदार तेजा सिंघ समुंदरी हाल में डॉ. मनमोहन सिंघ के निधन पर शोक सभा आयोजित कर उन्हें श्रद्धांजलि भेंट की गई और बाद में शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी का मुख्यालय और इससे सम्बन्धित संस्थान एक दिन के लिए बंद रखे गए। शोक सभा के दौरान शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के समूह कर्मचारियों ने 'मूलमंत्र' और 'गुरमंत्र' का जाप कर अरदास की। इस अवसर पर धर्म प्रचार कमेटी के सदस्य भाई अजायब सिंघ अभ्यासी और शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के सचिव स. प्रताप सिंघ ने डॉ. मनमोहन सिंघ की देश-प्रति सेवाओं को याद किया। उन्होंने कहा कि डॉ. मनमोहन सिंघ ने एक आम परिवार में से उठ कर अपनी मेहनत और लियाकत के बल पर उच्च स्थान प्राप्त किया। वे देश के पहले सिक्ख प्रधानमंत्री बने, जिससे सिक्खों की पहचान को पूरी दुनिया में पहचान मिली। स. प्रताप सिंघ ने कहा कि सिक्ख कौम को डॉ. मनमोहन सिंघ पर फख्र है और उनके सम्मान के तौर पर शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी प्रधान एडवोकेट हरजिंदर सिंघ धामी के आदेशानुसार शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी का मुख्यालय व अन्य संस्थाओं में एक दिन का अवकाश घोषित किया गया है।

आयोजित शोक सभा में ओएसडी स. सतबीर सिंघ (धामी), धर्म प्रचार कमेटी के सचिव स. बलविंदर सिंघ काहलवां, अतिरिक्त सचिव स. प्रीतपाल सिंघ, निजी सचिव स. शाहबाज सिंघ, उप सचिव स. गुरचरन सिंघ कोहाला, स. जसविंदर सिंघ जस्सी, स. बलविंदर सिंघ खैराबाद, स. हरभजन सिंघ वक्ता, अधीक्षक स. निशान सिंघ, स. मलकीत सिंघ बहिड़वाल, मैनेजर स. सतनाम सिंघ रिआड़ सहित शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, धर्म प्रचार कमेटी और श्री दरबार साहिब का समूह स्टाफ उपस्थित था।

उल्लेखनीय है कि शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी ने अपनी कार्यपालिका की सभा में डॉ. मनमोहन सिंघ के निधन पर शोक प्रस्ताव पारित कर उन्हें भावपूर्ण श्रद्धांजलि भेंट की है।

शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के प्रधान ने गुरुद्वारा चुनाव आयोग को लिखा पत्र : मामला मतदाता सूचियों में पाई गई खामियों का

श्री अमृतसर साहिब : १० जनवरी : शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के प्रधान एडवोकेट हरजिंदर सिंघ धामी ने गुरुद्वारा चुनाव आयुक्त जस्टिस एस. एस. सारों को पत्र लिख कर आयोग द्वारा शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की प्रकाशित प्राथमिक मतदाता-सूचियों के सम्बन्ध में एतराज़ दर्ज करवाए हैं। उन्होंने कहा कि प्रकाशित की गई सूचियों में कई ग़ैर-सिक्खों के नाम सामने आ रहे हैं, जिनके नाम के साथ 'सिंघ' तथा 'कौर' भी शामिल नहीं है। इसके अलावा सूचियों में वोटरों की शिनाख़्त के लिए पहचान को दर्शाती फोटो भी शामिल नहीं की गई। प्रकाशित की गई सूचियों को हासिल करने में भी सिक्ख संगत को भारी मुश्किल पेश आ रही है।

एडवोकेट धामी ने कहा कि इस चल रही प्रक्रिया के अंतर्गत उचित ढंग से एतराज़ दर्ज करवाना संभव नहीं है और इससे पंजाब सरकार की मनमानी स्पष्ट हो रही है, जिसके सम्बंध में शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी पहले ही आशंका प्रकट कर चुकी है। उन्होंने कहा कि इस तरह लगता है कि बूथ स्तर पर तैनात बीएलओ द्वारा विधान सभा और लोक सभा के मतदान से सम्बन्धित मतदाता सूचियों में से नाम लेकर ये सूचियां तैयार की गई हों। उन्होंने कहा कि शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की बेहतर प्रशासनिक व्यवस्था के लिए यह आवश्यक है कि इस संस्था के सदस्य चुनने के लिए वोटर भी नियमानुसार योग्य ढंग के साथ पंजीकृत किये जाएँ।

लिखे गए पत्र में एडवोकेट धामी ने मुख्य आयुक्त गुरुद्वारा चुनाव आयोग से माँग की है कि मतदाता सूचियों की आनलाइन तथा निर्धारित केन्द्रों पर उपलब्धता सुनिश्चित की जाये। गुरुद्वारा चुनाव आयोग द्वारा वोटर पंजीकरण प्रक्रिया के समय फोटो सहित फार्म जमा करवाने के निर्देश के मद्देनज़र मतदाता सूचियां मतदाताओं की फोटो सहित प्रकाशित की जाएँ, ताकि पता चल सके कि मतदाता बनने वाला व्यक्ति साबित सूरत/ केशाधारी सिक्ख है। उन्होंने ग़ैर-सिक्खों के शामिल नाम ख़ारिज करने के आदेश जारी करने की भी माँग की।

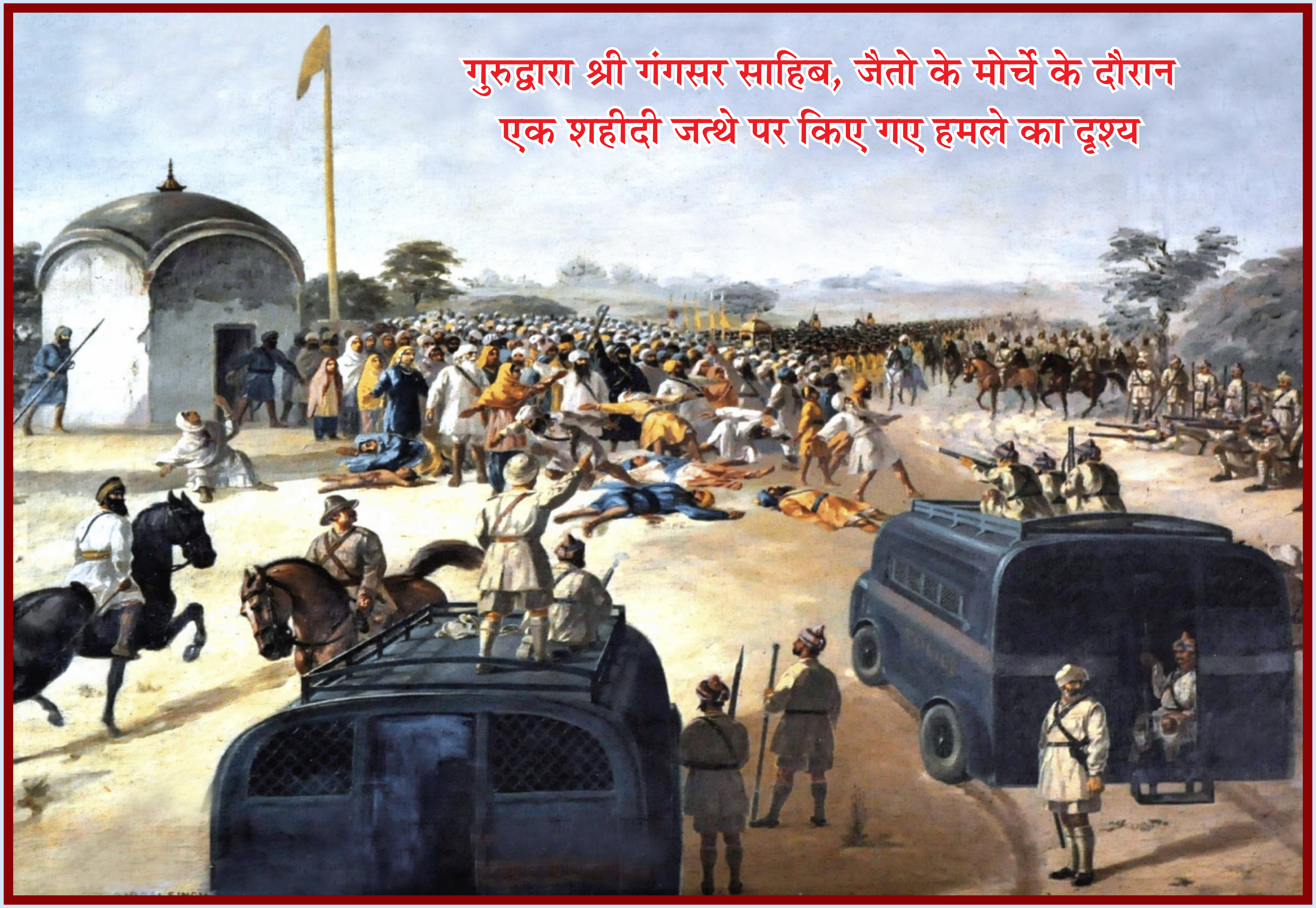
गुरुद्वारा श्री गंगसर साहिब, जैतो के मोर्चे के दौरान
एक शहीदी जत्थे पर किए गए हमले का दृश्य

Registered with RNI at No. PUNHIN/2007/21665

Postal Registration No. L-1/PB-ASR/008/2023-25 Licensed to Post without Pre-Payment No. PB/R-001/2023-25

GURMAT GYAN February 2025

DHARAM PARCHAR COMMITTEE,

Shiromani Gurdwara Parbandhak Committee, Sri Amritsar Sahib (PUNJAB)

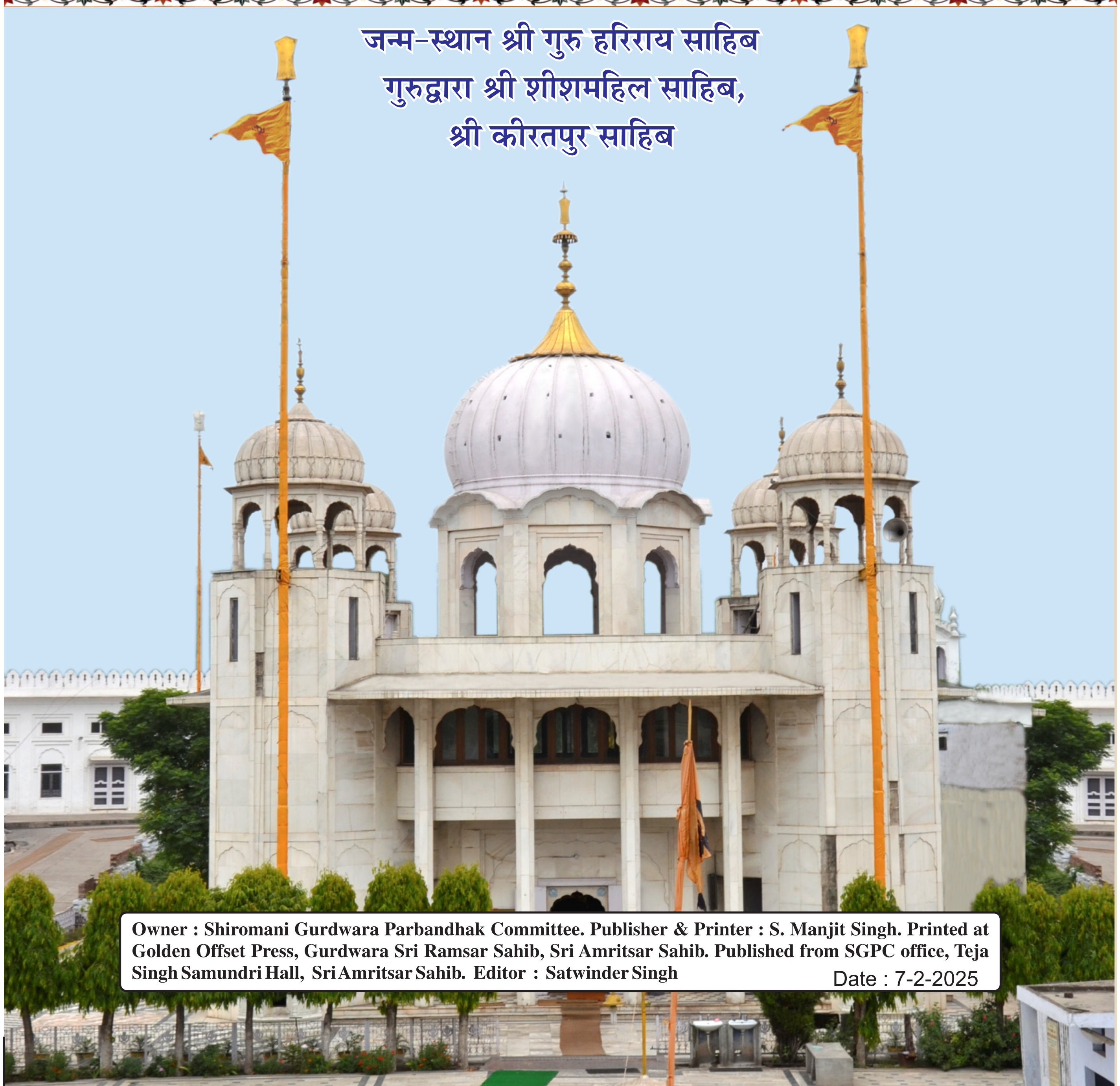

जन्म-स्थान श्री गुरु हरिराय साहिब
गुरुद्वारा श्री शीशमहिल साहिब,
श्री कीरतपुर साहिब

Owner : Shiromani Gurdwara Parbandhak Committee. Publisher & Printer : S. Manjit Singh. Printed at Golden Offset Press, Gurdwara Sri Ramsar Sahib, Sri Amritsar Sahib. Published from SGPC office, Teja Singh Samundri Hall, Sri Amritsar Sahib. Editor : Satwinder Singh

Date : 7-2-2025